जन जागरण की विचार प्रधान त्रैमासिकी

तीसरा पक्ष

हुकूमत की बुनियाद ढ़ाये चला जा
जवानों को बागी बनाये चला जा.
जुनूने—बगावत न हो जिन सरों में
उन्हें ठोकरों से उड़ाये चला जा.
गरीबों के टूटे चरागों की लौ से
अमीरों के एवां जलाये चला जा.
शहीदाने—मिल्लत की सौगन्ध तुझको
ये परचम यूं ही लहलहाये चला जा.
परखचे उड़ा डाल अरबावे—जर के
गरीबों को बागी बनाये चला जा.

—श्री साहिर लुधियानवी

तीन

जन-जागरण की विचार प्रधान
त्रैमासिकी

तेवरी-पक्ष

अंक—तीन, वर्ष—एक
जन०-फर०-मार्च-८४

संरक्षक

जफर आलम

लाला रामचरन गुप्ता

परामर्श—

हरद्वारीलाल वशिष्ठ

भंवरपाल सिंह

श्याम बेवस

देशबन्धु अग्रवाल

अनिल कुमार सक्सेना, अधिवक्ता

सम्पादक—

रमेशराज

सह-सम्पादक

अरुण लहरी

योगेन्द्र शर्मा

सुरेश त्रस्त

सम्पर्क—१५/१०६, ईसानगर
अलीगढ़ २०२००१

—समस्त विवादों का न्याय क्षेत्र अलीगढ़ होगा ।

Scanned by CamScanner

बात तब की है
जब देश अंग्रेजों के
खूनी शासन के पंजों के बीच
दम तोड़ रहा था,
शानो-शोकत पर उड़ाई जा रही थी
जनता के खून-पसीने की कमाई,
आदमी को नोच-नोच कर
खा रहे थे आता ताई.
भूखे पेट सो जाता था
सबके लिये अन्न उगाने वाला कृषक,
उनके बच्चों के मुँह तक
न पहुँच पाती थी एक रोटी तक,
शरीर ढापने के लिये
एक-एक कपड़े को तरसता था
वस्त्र-पूर्ति करने वाला बुनकर,
आदमी के सीने पर रखा हुआ था
शोषण का बोझीला पत्थर
फुटपाथों और गन्दी बस्तियों में
जीते मरते थे
बड़े-बड़े भवन बनाने वाले मजदूर
जनता के सपने, विश्वास ------

हो रहे थे चूर—चूर,
एक मखौल ———एक मजाक
बन गया था पूरा न्याय तंत्र
बात तब की है
जब सरदार भगतसिंह ने
क्रान्तिकारी शब्दों में कहा था—
"बहरों को सुनाने के लिए
ऊँची आवाज की जरूरत होती है,
बात तब की है
जब राम प्रसाद 'बिस्मिल' ने
शब्दों में हथियार उठाते हुए कहा था—
"सरफरोशी की तमन्ना जब हमारे दिल में हैं
देखना है जोर कितना बाजू-ए-कातिल में है
बात अब की है
जब कि हमें आजादी मिले हुए
सेंतीस वर्ष पूरे हो चुके हैं
और इन सेंतीस वर्षों में
हम अपना चरित्र, आदर्श
सभ्यता, संस्कृति नैतिकता
यानि सब कुछ खो चुके हैं,
धर्म और मानवता के नाम पर
आदमी का लहू पी रहे हैं जालसाज
व्यभिचारी मानसिकता में
डूबा हुआ है पूरा समाज
बात अब की है
जब कि हमें पुनः चीख-चीखकर
कहना पड़ रहा है—
"क्रोध की मुद्रा बताओ दोस्तो !
जड़ व्यवस्था को हिलाओ दोस्तो
देश यहां के सम्राटों ने लूट लिया

× × ×

सत्ताधारी कुछ भाटों ने लूट लिया

× × ×

रोजो रोटी दे हमें या तो ये सरकार
वर्ना हम हो जायेंगे गुस्सैले खूंख्वार
अब एक ज्वालामुखी में
तब्दील होती जा रही है
हमारे भीतर की आग
और एक संघर्ष, एक क्रान्ति की संस्कृतिक
बन रही है समूची कविता.

रमेशराज

— ★ —

Scanned by CamScanner

तेवरी-पक्ष

पाठकीय

अलीगढ़

तेवरी-पक्ष अन्याय पूर्ण उत्पीड़क समाज व्यवस्था को बदलने के लिये प्रतिबद्ध सोच को समर्पित लघु, समर्थ तथा सहज रचनाओं का समृद्ध संकलन. 'तथाकथित साहित्यकार' स्तम्भ साहसिक प्रयास. तेवरियों का प्रहार-लक्ष्य वर्तमान राजनीतिक व्यवस्था की विसंगतियां, विद्रूप तथा उनके विडम्बनामय परिणाम रहे हैं. तेवरी-पक्ष के दोनों अकों की रचनाओं के विचार-पक्ष की सीमाओं को रेखांकित न करना इस सद्यः जात प्रत्रिका के प्रति अपनी जिम्मेदारी से आंख बचाना होगा.

—श्री नाथ, कानपुर.

यह पक्ष अपने आप में नवीन, अद्‌भुत और सार्थक लगा. बहरहाल, तेवरी पक्ष से जुड़े लेखकों, कवियों को मुबारक बाद. क्यों कि ये तरो-ताजा तेवर दे रहे हैं. जिनसे कई फायदे होने की उम्मीद है.

—श्री यशपाल वैद अम्बाला छावनी.

साहित्य में अब भी नये आन्दोलन होते हैं, शुरू में उनका विरोध एक परम्परा है, किन्तु वैचारिक दृढ़ता इन चुनौतियों को झेलती हुई अपने उद्‌देश्य तक बढ़ जाती है, सामाजिक जड़ता पर निरन्तर प्रहार होना चाहिये. मैं आपके अभियान की प्रशंसा करता हूँ.

—श्री नारायणलाल परमार, रायपुर.

तेवरीपक्ष-३ पृ०-५

लघु में दीर्घ का संजोना एक कला है, जिसे आपने बखूबी कर दिखाया है.

— श्री अनिल भ्रमर, इलाहाबाद

'मंच' के अन्तर्गत आपके तर्क जोरदार हैं. 'ये तथा कथित साहित्यकार' के अन्तर्गत आपने इस बार एक अच्छी चीज से रुबरू होने का मौका दिया है.

—श्री चित्रेश, सुल्तानपुर

परम्परावादी दृष्टि-कोण रखने वाले हर व्यक्ति को नई चीज, नयी पहल ऊट-पटांग लगती है. हर जमाने में प्रगति की गाड़ी का जुआ युवाओं के कन्धे ही रहा है. आप बिलकुल विचलित न हों, तेवरी अपनी वैचारिक विशिष्टता से ही पहचानी जायेगी.

आप गजल के छन्द के समानान्तर चलने का आवाहन कर रहे हैं, यह कोई कठिन काम नहीं है. छन्द में कविता कहने के लिये. छन्द में कविता कहने वालों के लिये सिपाहियों की क़मी नहीं रहेगी. विश्वास कीजिये.

अब आप दुष्यन्त कुमार, रामप्रसाद बिस्मिल, फैज आदि को गजल की महफिल से उठा ला सकते हैं, तो भाई हम तो स्वतः हा खींचे चले आने वाले जीव हैं.

—श्री नीतीश्वर शर्मा 'नीरज', मुजफ्फरपुर

व्यवस्था के दर्द और व्यवस्था के अत्याचार की गहरी पकड़ — साहित्य जगत के सुसुप्त भुजंगों को जागृतावस्था में लाने के लिये तेवरी-मडल इसी तरह आग उगलता रहा कभी न कभी कोई न कोई सिरा चपेट में आयेगा तब — — !?

—श्री पृथ्वीनाथ पांडेय, इलाहाबाद

शोषण उत्पीडन, अन्ध विश्वास एवं सामाजिक रूढ़ियों के विरोध में आपका प्रयास निश्चय ही श्लाघनीय है, किन्तु ध्यान यही रखना है कि पत्रिका केवल आलोचना तक ही सीमित न रह जाये; अपितु कुछ रचनात्मक सुझाव भी प्रस्तुत करे — तेवरी की रचनाओं से जहां बौद्धिक व संवैधानिक क्रान्ति की प्रेरणा मिलनी

चाहिए वहां रचनाओं से ऐसी ध्वनि निकलती है कि वे खूनी क्रान्ति चाहती हों. यह बात राष्ट्रहित मे नहीं दिखाई देती, इससे साहित्यकार की मानसिक अपरिपक्वता झलकती है.

—श्री प्रेमबल्लभ शर्मा, अलीगढ़

तेवरी पक्ष एक तीखी बगावत लेकर उभरा है.

— श्री महेन्द्रसिंह महलान, फेकाना

आप लोग प्रेमचन्द के होरीराम और दातादीन को अन्जाने या जानबूझकर मिथक का रूप दे रहे हैं, नये मिथक निर्माण करना कोई छोटी बात नहीं हैं. मिथक युगों को छलनी से छन कर बनते हैं.

—श्री बाबूराम वर्मा, देहरादून

जन जागरण की विचार प्रधान त्रैमासिकी के नाम स्वरूप आपने जो सम्पादन-भार लिया है, धीरे-धीरे इतिहास का एक चर्चित अध्याय खुलता जा रहा है. अब समय तेवरी को विस्तार से स्पष्ट करने का नहीं है, आंच में तपाने का है. अब यह आन्दोलन नहीं रह गया, लगता है एक तेवरी जंग छिड़ गयी है.

—श्री राजकुमार 'निजात', सिरसा

सरस्वती पुत्र द्वारा भारतीय साहित्यकारों को अपमानित किया जाना अविवेकपूर्ण व खेद जनक है.

—रोहिताश्व अस्थाना, हरदोई

कौन कहता है कि तेवरी साहित्य की विधा नहीं हो सकती. भाई अपनी बात जब नये तौर तरीके से रखेंगे, तभी लोग समझ पाने की चेष्टा करेंगे. तेवरी का विरोध एक पागलपन है.

—श्री भगवानप्रसाद उपाध्याय, प्रयाग

ईमानदारी से किया जा रहा आपका यह प्रयास एक दिन अवश्य रंग लायेगा.

—श्री चरण लाल 'चरण' झुंझनू

तथाकथित साहित्यकार ने चौंकाया.

—श्री शिवकुमार थदानी, मुजफ्फरपुर

रमेशराज का दोहों पर तेवरी का प्रयोग 'तेवरी की भारतीयता के लिये अनुकरणीय है.

— श्री गिरिमोहन गुरू, होशंगाबाद

सुन्दर, सटीक, प्रभावशाली पत्रिका.

—श्री टी० महादेव राव, विलासपुर

कोई भी विधा मात्र कथ्य के आधार पर न तो स्थापित हुई है न स्वीकार्य, तेवरी-पक्ष की सम्पूर्ण ऊर्जा इसमें नष्ट नहीं होनी चाहिए कि तेवरी विधा स्थापित करना है, बल्कि विद्रोही तेवरों को जनमानस तक सम्प्रेषित कर चेतना जाग्रत करना है.

—श्री योगेन्द्र दवे, जोधपुर

जहां श्रृंगार रस की प्रधानता हो वहां वीर रस का मंच बनाना सराहनीय है.

— श्री चन्द्राजी राव इंगले, झांसी

पत्रिका जन जागरण की दिशा में क्रान्ति लाकर ही दम लेगी.

—श्री सुनील हेम्ब्रम 'दिल खुश' संथाल परगना

पत्रिका पढ़ने लायक है.

—श्री मनोज कुमार शर्मा, फगवाड़ा

तथाकथित साहित्यकार पढ़कर मैं जरा भी नहीं चौंका, एक गुबरैले से हम क्या आशा रख सकते हैं ? मैले को कपूर में बदला जा सकता है ? नहीं नहीं भाई बिलकुल नहीं. यह भी कोई नयी बात नहीं जो हिन्दी/हिन्दुस्तान को खा रहे हैं, पर विदेशियों की 'गउनई गाते' मुँह में छाले नहीं पड़ते हैं.

— श्री राजकुमार सिंह, कानपुर

तेवरी को एक नई विधा के रूप में स्थापित करना है तो इसकी परिभाषा और शिल्प के सम्बन्ध में स्पष्ट मान्यता को प्रस्तुत करना

Scanned by CamScanner

होगा-जैसे गीत में छन्द है गजल में शेर, रदीफ काफिया आदि होते हैं अर्थात हर विद्या का अपना एक छंद विधान होता है तो तेवरी क्या फोर्मेट है ? यह स्पष्ट होना ही चाहिए अन्यथा तेवरी के प्रति आपत्ति उठाने वालों को यह कहने की गुन्जायश रहेगी ही कि तिलमिलाते विद्रोही तेवरों के आधार पर मुक्त छन्द की कविता भी तेवरी क्यों नहीं हो सकती और यदि इसे गजल को अपदस्थ करके स्थापित करने का यत्न है अर्थात तेवरी का फोर्मेट तो गजल का रखना है और भाव पक्ष तेवरी का तो क्या हमें यह स्वीकार लेना चाहिए कि जिस रचना में मतला, मक्ता, रदीफ काफिया वाले ऐसे शेर हों जिनमें विद्रोही तेवर हो, वह तेवरी है ? तेवरी दो की रचनाएं पढ़ने पर भी यही आभास मिलता है. किन्तु इसी अंक में स्वय श्री रमेशराज की छह की छह रचनाओं में दोहे हैं शेर नहीं। इसका अर्थ हुआ कि किसी भी विद्या में कहीं विद्रोही बात को तेवरी कहा जा सकता है. कहा जा रहा है. जो इस अंक के सम्पादकीय से मेल नहीं खाता.

मुकुट सक्सैना, जयपुर

और ये भी—

तेवरियां पढ़कर हमारे भी तेवर बदल गये बस हाथ में ले लिया डंडा अब आप बताइये किसके सर पर दे मारूँ तेवरी बकवास है आप साहित्य में जो स्टंटबाजी कर रहे हैं, उसके लिये थोड़ी सी वाह-वाही चाहिए तो बोल देना.

—श्री कालीचरण प्रेमी, गाजियाबाद

भाई ! यदि आपके तेवर बदल ही गये हैं और हाथ में डंडा ले ही लिया है तो देर किस बात की, दे मारिये इसे इस घिनौनी व्यवस्था के सर पर, जिसे देखकर हमें किसी हद तक गाली गलौज के स्तर पर उतरना पड़ रहा है क्योंकि एक कहावत है न ? लातों के भूत बातों से नहीं मानते; तेवरी यदि स्टंट और बकवास है तो सार्थक कविता कौन-सी है ? एक लेख भेज सकें तो कृपा होगी, और हाँ कोरी वाह वाही कराने के लिये हिजड़ों की फौज बनाने का न तो हमें शौक है और न रहेगा . इस सुझाव हेतु क्षमा याचना.

—सम्पादक

इस तथ्य में कोई शक नहीं कि तेवरीकार स्वयं को 'महान' साबित

करने की नाकाम कोशिश कर रहे हैं, किसी तमाशगीर जमूरे की तरह चीख चिल्लाकर गजल के संदर्भ में भ्रामक, बचकानी, नासमझी भरे बयान देकर भीड़ जुटा रहे हैं, तेवरी के दिशाहीन, निर्जन मैदान में वे तेजी से दौड़ लगाने लगे हैं, जो गजल की महफिल में इज्जत नहीं बचा सके हैं, इस जाल साजी में कुछ बेशरम किस्म के लघुकथाकार भी शामिल हो गये हैं, जो पहले गजल लिखते रहे हैं.

तेवरी का भविष्य भी अकविता, विचार कविता, नवगीत की तरह अन्धकारमय ही है. परिणाम भी वही होगा, तेवरी कमअक्लों अनपढ़ों की बात के समान माननी होगी.

—श्री तारिक असलम 'तस्नीम' पटना

संपादक मंडल के ६-६ बिना तेवरों वाली तेवरियों के साथ होरीराम और 'तलवार' दो शब्दों के पुनः पुनः प्रयोग से तेवरी यदि सम्पूर्ण होती है तो मैं समझता हूं. इसके जैसी सरल साहित्यिक विधा अन्य नहीं: संपादक मंडल छपास के लालच से बच सके तो पत्रिका का भविष्य बहुत सुनहरा है.

श्री डा० आनन्द गोरे, विदिशा

—★—

समकालीन सामाजिक, राजनीतिक विसंगतियों पर

प्रहार करता हुआ

तेवरी संग्रह — १

अभी जुबां कटी नहीं

सम्पादक—रमेशराज

(सहयोगी मूल्य—५ रुपये)

अरुण लहरी, अजय अंचल, योगेन्द्र शर्मा

सुरेश त्रस्त, ज्ञानेन्द्र साज, रमेशराज

Scanned by CamScanner

नेपथ्य

——भारत में इस बात पर झगड़ा चल रहा था कि कांग्रेस के १९०५ वाले अधिवेशन की अध्यक्षता कौन करे. प्रतिद्वन्द्वियों में एक तरफ नरम दल के गोखले थे जिन्हें गान्धी जी ने बाद में अपना गुरु माना और दूसरे प्रतिद्वन्द्वी थे श्री लोकमान्य तिलक. भला इतने बड़े विषय पर श्याम जी कृष्ण वर्मा कैसे चुप रहते. उन्होंने अपने पत्र में गोखले और तिलक की तुलना करते हुए एक लेख लिखा. जिसका ब्योरा हम अविनाश बाबू की पुस्तक से उद्धृत करते हैं—

(१) जब १८९७ में ताउन के बहाने से भारतीयों पर अत्याचार हो रहे थे, तो उस पर गोखले और तिलक दोनों ने लिखा. पर गोखले माफी मांग कर अलग हो गये. लेकिन तिलक माफी न मांगकर १८ महीने की सजा काटते रहे.

(२) गोखले कुछ ही दिन बाद सरकारी कृपा से बम्बई विधायक परिषद के सदस्य नियुक्त हुए. उन्हें हर अधिवेशन में १००० रु० मिलते थे. पर यद्यपि तिलक पहले से इस परिषद के सदस्य थे. फिर भी उन पर मुकदमा चलने के कारण वह परिषद की सदस्यता के अयोग्य घोषित कर दिये गये.

(३) गोखले बाद को वायसराय की परिषद के सदस्य नियुक्त हुए और हर अधिवेशन में ५००० रु० पाने के अधिकारी हुए.

(४) ब्रिटिश सरकार ने गोखले को सी० आई० ए० की उपाधि दी.

नेपथ्य-3 पृ० 10

Scanned by CamScanner

(५) गोखले को तो मजे से भत्ता मिलता रहा, पर तिलक ने प्रमाणित कर दिया कि उन पर जो मुकदमा चला कर सजा दी गयी. वह सही नहीं था: फिर भी उन्हें किसी प्रकार की क्षति-पूर्ति नहीं की गयी.

अन्त में श्री श्याम जी कृष्ण वर्मा ने लिखा था—

देखिए कि किस तरह एक पेशेवर राजनीतिज्ञ तरक्की करता है और सिर न झुकाने वाला देशभक्त मुसीबतों में फंसता है.

साभार : श्री मन्मथ नाथ गुप्त, १४ डी०, निजामुद्दीन ईस्ट
नयी दिल्ली-११००१३

—×—×—

जनाक्रोश की सशक्त अभिव्यक्ति

शीघ्र प्रकाश्य तेवरी संग्रह-३

इतिहास घायल है

सम्पादक —रमेशराज

मूल्य—दस रुपये

इस संग्रह के सशक्त हस्ताक्षर हैं :—

अरुण लहरी, अनिल 'अनल', योगेन्द्र शर्मा
रमेशराज, सुरेश त्रस्त

Scanned by CamScanner

शायरे-आजम गालिब गैर मजहबी इन्सान था. वह खुद्दार भी नहीं था. गालिब शराब की बोतलों पर बिक गये थे: उन्होंने अंग्रेज हुक्मरानों से शराब की घूस लेकर अनेक मुसलमान विद्वानों को गिरफ्तार कराया और बाद में रिश्वत लेकर उन्हें छुड़वाया.

फरीद पाशा 'आजाद' पंजाब केसरी, १२जून-८३

कहते हैं रवीन्द्र नाथ ठाकुर द्वारा कबीर के अंग्रेजी अनुवाद को नोबल पुरस्कार देने वाले मौलिक रचना समझ बैठे थे.

पथ प्रदर्शिका-१९७७-७८, पृष्ठ ६४

प्रगतिवादी कविता इन्दिरा गांधी से पुरस्कृत हो, धन्य हो गयी.

बाबा नागार्जुन, १८ मई, १९८३

हमारा राष्ट्रीय-गीत 'जन-गण मन' गुरु देव रवीन्द्र नाथ ने सन् १९११ में जार्ज पंचम की भारत यात्रा पर उनके स्वागत-सम्मान में लिखा था. जिसे हम बिना इसका अर्थ जाने राष्ट्रीय, गीत के रूप में गाये जा रहे हैं. यह हमारी अंग्रेज-परस्ती का सबसे भयंकर उदाहरण है.

दीपक कुमार, पंजाब केसरी, १ अग०-८३, पृ०४

अब यह सिद्ध हो चुका है कि 'इन्दुमती' कहानी (किशोरी लाल गोस्वामी) 'टेम्पेस्ट' (शेक्सपीयर) का छायानुवाद अथवा उसी के कथानक के आधार पर लिखी गयी कहानी थी. उसमें कथा तो बिलकुल वही थी, केवल पात्रों व स्थानों के नाम भारतीय रख दिये गये थे.

प्रदीप-८२-८३, पृष्ठ २६

तेवरीपक्ष-3 पृ० 12

तेवरी : शिल्प-गत विशेषताएं

—रमेशराज

जब हम किसी कविता के शिल्प पर चर्चा करते हैं तो शिल्प से आशय होता है—उस कविता के प्रस्तुत करने का ढंग अर्थात् प्रस्तुतीकरण प्रस्तुत करने की यह प्रक्रिया उस कविता की भाषा, छंद, अलकार, मुहावरे, शब्द-प्रयोग, प्रतीक, मिथक आदि विषय वस्तुओं के ऊपर पूर्ण रूपेण निर्भर होती है.
इन संदर्भों में यदि हम तेवरो और गजल के शिल्प पर सूक्ष्म चिन्तन मनन करें तो तेवरी और गजल एक दूसरे से किसी भी स्तर पर कोई भी साम्य स्थापित नहीं करतीं.

तेवरी की रचना अधिकाँशतः हिन्दी काव्य के छंदों पर आधारित हैं. अर्थात् तेवरी में सन्तुलन लघु और दीर्घ स्वरों के प्रयोग, क्रम और सख्या, यानि मात्रओं के अनुसार किया जाता है. इसके लिये गजल की बहरों की तरह लघु और दीर्घ स्वरों का एक निश्चित क्रम में आना कोई आवश्यक शर्त नहीं है. स्वर-प्रयोग इस बात पर ज्यादा निर्भर करते हैं कि रचना अधिक से अधिक सम्प्रेषणशील किस तरह बनायी जाये. और यही कारण है कि तेवरी में इस प्रकार के छंदों का प्रयोग काफी दृष्टि गोचर हो रहा है जो कि भारतीय संस्कृति में रचा बसा है. चौपाई, दोहा, आल्हा, घनाक्षरी, सवैया, रोला. सरसी, ताटंक आदि छंद आम जनता के जीवन के निकट से उठाये गये हैं ताकि तेवरी जन-मानस की भाषा-सस्कृति के साथ घुल-मिल कर एक ऐसी भाषा और छंद का निर्माण करे जो अपना-सा लगे,

उपरोक्त कथित छंदों का प्रयोग उनके पूर्व प्रचलित रुप में न करके उनको अन्त्यानुप्रास वैशिष्ट्य के कारण तेवरी के रुप में स्वीकारा गया है. उदाहरण स्वरुप-

"बस्ती-बस्ती मिल रहे, अब भिन्नाये लोग
सीने में आक्रोश की, आग छुपाये लोग
मन्दिर-मस्जिद में मिले, हर नगरी, हर गांव
धर्म, न्याय, भगवान से चोटें खाये लोग.

उपरोक्त छंद दोहे के निकट का छंद है, किन्तु अपने अन्त्यानुप्रास की विशेषता के कारण यह दोहा न होकर तेवरी का रुप ग्रहण किये हुए है क्यों कि इसकी प्रथम, द्वितीय, चतुर्थ पंक्तियों के अन्त में भिन्नाये, छुपाये, खाये समतुकांत, और 'लोग' शब्द की पुनरावृत्ति तथा तीसरी पंक्ति का चौथी पंक्ति के अत्यानुप्रास से मेल न खाना इसे दोहे की विशेषताओं से भिन्न किये हुए हैं. या ये कहा जाये कि उपरोक्त प्रयोग 'दोहों में तेवरी का प्रयोग' है तो कोई अतिशियोक्ति न होगी.

ठीक यही बात तेवरी में हिन्दी काव्य के अन्य परम्परागत छंदों के साथ भी लागू होती है.

घनाक्षरी 'चौपाई, सरसी, ताटंक, आल्हा आदि के तेवरी में कुछ प्रयोग और देखूँ—

"सबको खूँ पीं लेत सहेली
खद्दर धारी प्रेत सहेली"

× × ×

डाकुओं का तुम ही सहारौ थानेदार जी
नाम खूब है रह्यौ तिहारौ थानेदार जी.

× × ×

लूटें गुन्डे लाज द्रोपदी नंगी है
देखो भइया आज द्रोपदी नंगी है"

+ × +

बस्ती-बस्ती आदमखोरों की चर्चाएं हैं
अब तो डाकू तस्कर चोरों की चर्चाएं हैं"

Scanned by CamScanner

सारी उमर हुई चपरासी चुप बैठा है गंगाराम
चेहरे पर छा गई उदासी चुप बैठा है गंगाराम

× × ×

गांव-गांव से खबर मिल रही, सुनिये पंचो देकर ध्यान
जनता आज गुलेल हो रही, कविता होने लगी मचान।

+ × ×

तेवरी की प्रथम दो पंक्तियों जिनके अग्र व पश्च तुकांत आपस में मिलते हैं उन्हें प्रथम तेवर कहा जाता है. तत्पश्चात् तीसरी व चौथी पंक्ति (जिनमें तुकांत साम्य हो भी सकता है और नहीं भी) को मिलाकर दूसरा तेवर बोला जाता है. ठीक इसी तरह तीसरा चौथा पाँचवां — अन्तिम तेवर को मिलाकर सम्पूर्ण तेवरी का निर्माण होता है.

तेवरी के तेवरों की कोई संख्या निर्धारित नहीं है वह दो से लेकर पचास— —सौ तक भी हो सकते हैं. इसके साथ ही यह भी कोई जरूरी नहीं है कि तेवरी में गजल के मतला मक्ता जैसी कोई मजबूरी हो. समस्त तेवर गजल के सामान्य शेरों या मतला मक्ताओं की तरह भी प्रयुक्त हो सकते हैं.

तेवरी में तुकांतों का प्रयोग संयुक्त तथा प्रथक दोनों रूपों में हो सकता है.

तेवरी के तेवरों का कथ्य किसी गीत की तरह श्रंखलाबद्ध तरीके से समस्त पंक्तियों के साथ आपस में जुड़ा होता है अर्थात तेवरी के तेवरों के संदर्भ एक दूसरे के अर्थों को पूर्णता प्रदान करते हुए आगे बढ़ते हैं, जब कि गजल के साथ इसके एक दम विपरीत है.

इस प्रकार छन्दगत विशेषताओं के आधार पर यह बात बल पूर्वक

Scanned by CamScanner

कही जा सकती है कि तेवरी अलग है और गजल अलग. जिनमें मात्र अन्त्यानुप्रास(वो भी ज्यो का त्यों नहीं)के कोई साम्य नहीं.

तेवरी की भाषा जन सामान्य की बोल चाल की भाषा है. उसमें प्रयुक्त होने वाले शब्द जन साधारण के बीच से उठाये गये हैं.

कुछ बोलचाल की भाषा के प्रयोग देखिये—

"धींगरा ते कब हूं न पेस तियारी पड़ि पायी
बादे निर्बल कूं ही मारौ थानेदार जी.

× × ×

नाते रिस्तेदार और यारन की घातन में
जिन्दगी गुजरि गयी ऐसी कछु बातन में.

× × ×

यार कछु गुन्डन कौ नेता नाम परि गयौ
हंसि-हंसि देश कूं डुबाय रहें सासु के.

कुछ खड़ी बोली के जन सामान्य के सम्बोधन के प्रयोग—

"है हंगामा शोर, आजकल भइया रे
हुए मसीहा चोर, आजकल भइया रे.

× × ×

अब तो प्रतिपल घात है बाबा
दर्दों की सौगात है बाबा.

× × ×

कुंठित हर इंसान है भइया
करता अब विषपान है भइया.

तेवरी की भाषा सपाट और एक दम साफ-साफ है. वह पाठक को

लच्छेदार प्रयोगों के रहस्य में उलझा कर भटकाती नहीं है. इसी कारण तेवरी में अभिधा शक्ति के प्रयोगों का बाहुल्य मिलता है.

"खादी आदमखोर है लोगो
हर टोपी अब चोर है लोगो

× × ×

देश यहां के सम्राटों ने लूट लिया
सत्ताधारी कुछ भाटों ने लूट लिया

+ + +

वही छिनरे वही डोली के संग हैं प्यारे
देखले ये सियासत के रंग हैं प्यारे.

तेवरी की भाषा इतनी सहज, सम्प्रेषणीय है कि उसे समझाने के लिये शब्दकोष नहीं टटोलने पड़ते.

"रिश्वत चलती अच्छी खासी, खुलकर आज अदालत में
सच्चे को लग जाती फांसी, खुलकर आज अदालत में

× × × ×

रोजी रोटी दे हमें या तो ये सरकार
वर्ना हम हो जायेंगे गुस्सैले खूंख्वार

× × ×

खेत जब--जब भी लहलहाता है
सेठ का कर्ज याद आता है.

+ + +

हमारे पूर्वजों को आपने ओढ़ा--बिछाया है
कफन तक नोच डाला लाश को नंगा लिटाया है

तेवरी में प्रयुक्त होने वाले अलंकारों में तेवरी के तुकांतों में वीप्सा शब्दालंकार के प्रयोग बहुतायत से मिलते हैं. अर्थात पंक्तियों के अंत में घृणा, शोक, विस्मय, क्रोधादि भावों की प्रभावशाली अभिव्यक्ति के लिये शब्दों की पुनरावृत्ति होती है—

"सब परिन्दे खौफ में अब आ रहे हैं हाय हाय
बाज के पंजे उछालें खा रहे हैं हाय--हाय.

खरबूजे पर छुरी चलायी टुकड़े--टुकड़े
इज्जत अपनी बची—बचायी टुकड़े--टुकड़े

\+ × +

इस बस्ती में हैं सभी टूटे हुए मकान
सुविधाओं के नाम पर लूटे हुए मकान.

\+ ÷ +

लूटता साहूकार, क्या कहिये
उसके खातों की मार, क्या कहिये.
मन पर रख पत्थर कोने में
हम रोये अक्सर कोने में.
हर सीने में आजकल सुविधाओं के घाव
रोज त्रासदी से भरी घटनाओं के घाव.

इसके साथ ही अर्थालंकार के अन्तर्गत बिच्छू, सांप, शैतान, मछली, काठ के घोड़े, रोटी, बहेलिया आदमखोर, तस्कर, चोर, डकैत, भेड़िया, चाकू, थानेदार, टोपी, वर्दी, कुर्सी, तलवार, गुलेल, साजिशी, जुल्मी, बाज, चील, अत्याचारी, जनसेवक जी, अपराधी, सम्राट, भाट आदि शब्दों का आदमी के लिये उपमानों तथा प्रतीकों के रूप में प्रयोग खुलकर मिलता है –

"मैं आदमखोरों से लड़ लूं
तुझको चाकू बना लेखनी
जिस दिन तेरे गांव में आ जायेगी चील
बोटी--बोटी जिस्म की खा जायेगी चील.
तड़प रहे हैं गरम रेत पर मछली-से
हम भूखे लाचार सेठ के खातों में,
मंच-मंच पर चढ़े हुए हैं जन सेवक जी
हाथ जोड़कर खड़े हुए हैं जन सेवक जी.
आदमी को खा रही हैं रोटियाँ
हिंसक होती जा रही हैं रोटियां.
सब ही आदमखोर यहां हैं
डाकू, तस्कर, चोर यहां है.
आप इतना भी नहीं जानते, हद है
गिरगिट भी आज देश में आदमकद है

तेवरी में कई स्थानों पर शब्द प्रयोग इस प्रकार के मिलते हैं कि उनके चमत्कारों के कारण सम्प्रेषण अधिक बढ़ जात है.

"सिगरेट गाय धर्म सुअर की बात यहां
मन्दिर मस्जिद गिरजाघर की बात यहां
दंगा, कर्फ्यू, गश्त, सन्नाटा
शहर-शहर आहत है लोगो.
बर्दी टोपी लाठी गोली
घायल पीड़ित जनता भोली
चाँद, सितारे, नग्मे, घुंघरू, पायल, झाझर, खुशबू, झील
कैसे-कैसे बुनते सपने अब तो ये दीवाने लोग.

उपरोक्त तेवरों में शब्दों का इस तरह से प्रयोग किया गया है कि वे शब्द एक साथ मिलकर एक ऐसा बिम्ब खड़ा करते हैं, जिसमें कविता का मुख्य कथ्य छुपा होता है. जैसे प्रथम तेवर के सिगरेट, गाय, धर्म, सूअर, मन्दिर मस्जिद और गिरजाघर यहां साम्प्रदायिकता का एक जीवंत बिम्ब बनाते हैं.

तेवरी में मुहावरों के अछूत प्रयोग भी मिलते हैं.

"छोटा बड़ा एक दाम होगा
सियासत की फसल का आम होगा
जो भी बनता पसीने का लहू
तोंद वालों के काम आता है।
जो भी आता है मसीहा बनकर
सलीब हमको सौंप जाता है.
भीड़ का चेहरा पढ़ फुरसत किसे
हाथ में सबके लगा अखबार है.
वैसे तो बिच्छुओं की तरह काटते है ये
अटकी पे मगर तलुआ तलक चाटते हैं ये.
गोबर कहता है संसद को और नहीं बनना दूकान
परचों पर अब नहीं लगेंगे आंख मूंदकर और निशान
हर आदमी आज परेशान है भाई
हादसों के गांव का मेहमान है भाई.

आजादी का मतलब केवल हाथ जोड़कर खड़े रहो
धोखा देते रहे सियासी चुप बैठा है गंगाराम

उपरोक्त तेवरों में "सियासत की फसल का काम" 'मसीहा बनकर आना, सलीब सोंपना, भीड़ का चेहरा पढ़ना, बिच्छू की तरह काटना, तलुआ तलक चाटना, संसद का दूकान बनना, आंख मूंदकर निशान लगाना, हादसों के पांव का मेहमान, हाथ जोड़कर खड़ा रहना आदि ऐसे मुहावरों के सीधे और सहज प्रयोग हैं जो तेवरी के शिल्प में चार चांद लगा देते हैं.

तेवरी में समसामयिक यथार्थ के संदर्भों में प्रयुक्त कुछ पौराणिक एतिहासिक प्रतीकों और मिथकों के सार्थक प्रयोग और देखिए—

"पी लिया सच का जहर जब से हमारे प्यार ने
ज़िन्दगी लगती हमें सुकरात का एक घाव है.
अम्ल से धोये गये अबके सुदामा के चरण
पांव में अब कृष्ण की परात का एक घाव हैं
हंसा रही हैं एक मुर्दा चेहरे को
जिन्दगी-सुलोचना क्या करें
हाथ जोड़कर महाजनों के पास खड़ा है होरीराम
ऋण को अपने मन में लेकर आस खड़ा है होरीराम
होरी को थाने से डर है
झुनियां आज जवान हो गयी

इस प्रकार यह बात भी निर्विवाद रूप से कही जा सकती है कि भाषा अलंकार, मुहावरा प्रतीक, मिथक और शब्द प्रयोग के आधार पर भी तेवरी और गजल में किंचित साम्य नहीं हैं क्यों एक तरफ गजल की भाषा, मुहावरे प्रतीक मिथक, अलंकार और शब्द - प्रयोग में जहां साकी, शराब, मयखाना, वस्ल, दर्द, अलम, यास, तमन्ना, हसरत, तन्हाई, फिराक, महबूबा, नामाबर, जाहिद, सुरुर, कमसिनी, प्रेम के तीर खाने की हवस, तसव्वुरे-जाना, मख़मूर आखों, गाल, चाल, तिल जुल्फों के इर्द गिर्द भटकाते है वहां तेवरी आम आदमी की भाषा क साथ एका कार होकर सामाजिक यथार्थ को अभिव्यक्ति देती है.

—१५/१०९, ईसा नगर अलीगढ़—२०२००१

तेवरी : नारों की सार्थकता

—सुरेश त्रस्त

दर असल नारा अपने आप में कोई बुरी चीज नहीं हैं. अगर बुरा या अच्छा है तो उसका प्रयोग या उसका उद्देश्य. मार्क्स ने बहुत पहले एक नारा दिया था कि मजदूरों एक हो जाओ. इस नारे के तहत एक सार्थक क्रान्ति की गयी, यह बात किसी से छुपी नहीं हैं. सुभाष चन्द्र बोस ने नारा दिया —तुम मुझे खून दो, मैं तुम्हें आजादी दूंगा. फलस्वरूप भारत के पांवों में पड़ी गुलामी की बेड़ियां भड़भड़ा कर टूटने लगीं. ठीक इसी तरह 'विदेशी वस्त्रों का बहिष्कार करो' 'स्वतंत्रता हमारा जन्मसिद्ध अधिकार है. 'अंग्रजों भारत छोडो ' करो या मरो' आदि नारों ने भारतीय जनता के मन में एक ऐसी क्रान्ति फूंकी कि अंग्रेजी साम्राज्य जलकर राख हो गया और भारत का आजादी का सपना साकार हो उठा. यह बात दूसरी है कि 'आजादी का हक' भेडियों के हाथों में पहुंच गया. और हम आजाद भारत में पुनः गुलामों की तरह जीवन व्यतीत कर रहे हैं. और आज स्थिति यह हो गयी है कि सम्भवतः अंग्रेजों के शासन काल में इतना मानवीय शोषण नहीं हुआ होगा, जितना कि आज कारण स्पष्ट है कि एक तरफ जहां भारतीय संदर्भों में सुभाषचन्द्र बोस, भगतसिंह, लोकमान्य तिलक आदि केनारों के पीछे एक स्वस्थ, शोषण विहीन समाज की परिकल्पना थी, वहीं 'अंग्रेजों भारत छोड़ो विदेशी वस्त्रों का बहिष्कार करो, आदि नारों के पीछे सत्ता लोलुप नेताओं की 'कुर्सी-लिप्सा' भी छुपी हुई थी. दुर्भाग्यवश आजादी कुर्सी लोलुपों के हाथ लगी और आजादी का सपना आजादी मिलने के बाद भी सपना होकर रह गया.

जब कभी नारे के पीछे एक सुउद्देश्य छुपा होता है तो वह नारा न होकर एक आवाहन हो जाता है. दूसरी तरफ जब नारे के पीछे कोई षणयंत्र, स्वार्थ छुपा होता है तो वह नारा न होकर एक लफ्फाजी एक भ्रम, एक शब्दजाल बन जाता है. जिससे अधिकांशतः सामाजिक

अहित ही दृष्टिगोचर होते हैं, उदाहरण स्वरूप हिन्दू चीनी भाई-भाई' 'इन्दिरा-लाओ, देश बचाओ' गरीबी हटाओ, 'देश खतरे में है आदि ऐसे ही नारे हैं या थे, जिनके तहत राजनीति के बाजीगरों ने जनता के साथ एक धोखे भरा खेल खेला, परिणामतः ये नारे एक आवाहन न होकर कोरी लफ्फाजी बन गये. श्री लालबहादुर शास्त्री का नारा 'जय जवान, जय किसान' अपनी सार्थकता के कारण नारा न होकर एक आवाहन हो गया.

कहने का अर्थ यह है कि सामाजिक-क्रान्ति या परिवर्तन में नारा अपना एक अहं स्थान रखता है. या ये कहा जाये कि हर एक क्रान्ति किसी न किसी नारे के तहत हुई है तो कोई अतिशियोक्ति नहीं होगी. क्योंकि हर नारे के पीछे एक ऐसी सामाजिक तिलमिलाहट छुपी हुई होती है जो व्यक्ति-विशेष की न होकर पूरे समाज की हो जाती है.

यदि हम तेवरी पर दृष्टिपात करें तो ऐसा महसूस होता है कि हम कविता नहीं बल्कि कोई नारा पढ रहे हों. लेकिन यहां हमें यह अवश्य जान लेना होगा कि क्या ये नारे मात्र शब्दजाल या लफ्फाजी हैं या फिर इस खूनी व्यवस्था को तहस-नहस करने के लिये जनता के बीच दिये गये आवाहन हैं. यदि इन नारों की सार्थकता सामने आती है तो क्या हम इन्हें मात्र नारा कह कर ठीक उसी तरह नकार दें जैसे समकालीन-सरकार द्वारा बनाये गये 'बीस-सूत्रीय कार्यक्रम'. प्रधानमंत्री के बीस-सूत्र बुरे नहीं हैं. बुरा है तो सिर्फ आम जनता को इन कार्यक्रमों के तहत धोखे में रखने का षणयंत्र, कुर्सी से चिपके रहने का स्वार्थ. 'बीस सूत्रीय लुभावने नारों के पीछे एक घृणित उद्देश्य छुपा होने के कारण यह कार्यक्रम मात्र एक शब्दजाल बनकर रह गया है. लेकिन इसका अर्थ यह कदापि नहीं है कि बीस सूत्रीय नारे बुरे हैं, ठीक इसी तरह यदि तेवरी का प्रयोग नारों के रूप में किया जा रहा है तो इसमें आखिर बुराई क्या है ? इतिहास साक्षी है कि पूरे विश्व में सामाजिक-बदलाव नारों के द्वारा आया है.

नारों का प्रयोग अभी से नहीं युग-युग से होता चला आ रहा है.

साहित्य नारों से न तो कभी अछूता रहा है और न रहेगा. यदि नारा कोई बुरी चीज है तो हमें दिनकर, मैथिलीशरण गुप्त, धूमिल और समकालीन काव्य की सार्थकता पर भी प्रश्न-चिन्ह टांकने पड़ेंगे. क्योंकि इस साहित्य में हमें कई जगह नारेबाजी सी दिखलायी पड़ेगी. क्योंकि 'वीर तुम बढ़े चलो' से लेकर लूट रही सरकार, साथी जागरे' 'आओ लड़ाई में आओ कवि' 'माँगो सुविधा साधन लोगो' तक सिर्फ नारे ही नारे दृष्टि गोचर होंगे.

नारे की सार्थकता सिर्फ इसी बात में निहित है कि उससे सामाजिक उपयोग बढ़ता है या दुरुपयोग।

इस संदभ में तेवरी के पीछे न तो कुर्सी-लिप्सा है न कोई स्वार्थ और न कोई षडयंत्र. तेवरी समकालीन विकृतियों, विसंगतियों में फंसे आदमी को उससे बाहर निकाल कर एक ऐसी जमीन पर खड़ा कर देना चाहती है, जहाँ दो वक्त को रोटी मुहैया हो सके. आदमी दो पल चैन की सांस ले सके.

उदाहरण स्वरूप—

जड़ व्यस्था को हिलाओ दोस्तो
क्रोध की मुद्रा बनाओ दोस्तो

× × ×

जिसमें सो जाता हो भूखा हर मेहनतकश
उस निजाम के गाल छरो तुम आज राजजी

× × ×

क्यों जोड़े तुम हाथ खडे हो
छोड़ो यह बधुआपन लोगो

× + ×

रोजी रोटी दे हमें या तो ये सरकार
वर्ना हम हो जायेंगे गुस्सैले खूंख्वार

Scanned by CamScanner

उपरोक्त कथित तेवरों में आम आदमी की पीड़ा का एक ऐसा अहसास है, जो नारे का रूप लेता हुआ स्वस्थ समाज की परिकल्पना को साकार करने के लिये एक आवाहन का रूप ग्रहण कर लेता है. और कहीं न कहीं मन की जड़ता को ब्लेड की तरह छीलते हुये हमें क्रान्ति के लिये प्रेरित करता है.

इसलिये तेवरी का महत्व नारे बाजी या महज लफ्फाजी कह कर नकारना इस बात पर सोचने के लिये जरूर मजबूर करेगा कि यदि 'तेवरी' लफ्फाजी है तो सही और सार्थक कविता कौन-सी है और कैसी है ?

४६, आ० वि० कालौनी
सासनी गेट, अलीगढ़

★

जन-विरोधी मानसिकता पर एक और प्रहार

तेवरी संग्रह—२

कबीर जिन्दा है

सम्पादक-रमेशराज

(सहयोगी मूल्य-सजिल्द-२० रुपये, पेपरबैक-१२ रुपये)

राजेश महरौत्रा, गिरि मोहन गुरु, ऋषभदेव शर्मा. देवराज डा० देवराज, फजल इमाम मल्लिक, राजकुमार निजात विक्रम सोनी, डा० एन० सिंह, अरुण लहरी, अनिल 'अनल' योगेन्द्र शर्मा, सुरेश त्रस्त, रमेशराज आदि.

Scanned by CamScanner

तेवरी : यथार्थ आग्रही सामाजिक चेतना का स्वर

—अरुण लहरी

समाज सदैव परिवर्तन शील रहा है. जो कल था' वो आज नहीं, जो आज है वो कल नहीं रहेगा यह ध्रुव सत्य है कि जब-जब भी समाज में परिवर्तन हुए हैं मानव के रहन-सहन विचारों आदि में भी परिवर्तन आया है. आदिम काल में हमारे पूर्वज नंगे रहते थे, लेकिन आज ऐसा नहीं है जैसे-जैसे सभ्यता का विकास हुआ है, हमारे सोच, चिन्तन और विचारों मेंभी शनैः-शनैः परिवर्तन आया है. जैसा कि सभी जानते हैं कि साहित्य समाज का दर्पण है, इस प्रकार जिस युग में जैसा समाज था वैसा ही साहित्य रचा गया. वैदिक काल में जो साहित्य रचा गया, उसमें धर्म प्रधान था. उस काल में धर्म की जड़ें बहुत गहरी थीं. यदि हमें किसी काल विशेष की अवस्था का, उसकी उन्नति-अवनति आचार-विचार, ज्ञान-विज्ञान संगठन—विघटन का सही चित्र पाना अभीष्ट हो तो, हमें चाहिये कि उस समय के साहित्य का अवलोकन करें. यदि हम अपने उत्कर्ष-अपकर्ष-उत्थान- पतन, जय--पराजय, गुण--अवगुण एवं जीवन--दर्शन का यथा तथ्य विवरण अपने इतिहास से प्राप्त करना चाहें तो वैदिक साहित्य से आरम्भ करके लौकिक-संस्कृति साहित्य, पाली-साहित्य प्राकृत साहित्य अपभ्रंश साहित्य और मध्य कालीन तथा आधुनिक प्रादेशिक भाषाओं के साहित्य का अध्यन करना होगा. हमारा समाज अपनी समस्त विशिष्टताओं और दुर्बलताओं के साथ वहां चित्रित मिलेगा.

साहित्य एक ओर जहाँ सामाजिक-परिस्थितियों का चित्रण करता है, वहां दूसरी ओर उन परिस्थितियों को प्रभावित भी करता है.

तेवरीपक्ष-3 पृ० 25

Scanned by CamScanner

वस्तुत: साहित्य और समाज निरंतर एक दूसरे को प्रभावित करते रहे हैं और करते रहेंगे. जहां सामाजिक स्थिति, सामाजिक रचना के लिये सामग्री प्रदान करती है, वहीं साहित्य समाज की गतिविधियों में परिवर्तन और क्रान्ति की पृष्ठ भूमि तैयार करता है. इतिहास साक्षी है कि साहित्य ने सदैव समाज को बदला है. फ्रांस की राज्य क्रान्ति वाल्टेयर जैसे साहित्यकारों के प्रयत्नों का परिणाम थी. प्रेमचन्द, भगतसिंह, बिस्मल अशफाक, वंकिमचन्द्र चट्टोपाध्याय, भारतेन्दु हरिश्चन्द आदि के साहित्य ने भारतीय स्वतन्त्रता संग्राम की क्रान्ति में नये प्राण फूंके समाज में जैसे-जैसे अन्याय, शोषण, अत्याचार बढ़ा, ठीक वैसे ही साहित्य की सीमाएं बढ़ीं, अभिव्यक्ति के कौशल बढ़े. वह कविता रुचिकर मानी जाने लगी जिसमें या तो भाव विभोर करने की शक्ति रही हो या बुद्धि को झकझोर देने की.

हमारा राष्ट्रीय-जीवन राजनीति के क्षेत्र में अपना संकलल्प पूरा करे या न करे. हमारी कविता अभिशप्त जीवन के स्वर्ण पिंजर से निकलकर जन जीवन के समीप पहुंचती गयी है. उसका चरित्र आम आदमी के चरित्र से एकाकार हो गया है और उसे अभिव्यक्ति के क्षेत्र के जनवादी संस्कारों की उपलब्धि हुई है. समकालीन कविता जन साधारण के निकट तक पहुंचने उसके दुखदर्दों, भूख, त्रासदी, शोषण में हाथ बंटाने और उसे सही गलत की पहचान कराने के लिये अत्यधिक बेचैन है और उसी बेचैनी का नाम है तेवरी. तेवरी अपने भीतर शोषण, अत्याचार, उत्पीड़न, भूख, त्रासदी और चारित्रिक पतन से उत्पन्न हुआ एक ऐसा तेवर छुपाये हुये है जो कहीं न कहीं समाजिक परिवंतन और क्रान्ति की पृष्ठ भूमि तैयार करने में जुटा हुआ है.

सम सामयिक स्थितियों में—

तेवरी राशन के लिये लगी उस पंक्ति के लोगों का बयान है जिहें दो जून की रोटी की जुगाड़ के लिये अपनी सारी उम्र भर—खप कर गुजारनी पडती है.

तेवरी गरीब की कमीज को सींता हुआ सुई और धागा है.

Scanned by CamScanner

तेवरी गरीब की जवान होती हुई बेटी है, जिस पर दानवों की पैशाचिक दृष्टि गढ़—गढ़ जाती है.

तेवरी बेटी के लिये दहेज न जुटा पाने वाले बाप के के आसुंओं की करुण-गाथा है.

तेवरी गरीब के चूल्हे पर सिकती हुई वह रोटी है, जिससे किसी भूखे को क्षुधा शाँत होनी है.

तेवरी ऐसा धर्म युद्ध है, जिसका रणक्षेत्र सामाजिक विकृतियों और विसंगतियों से युक्त समाज है.

तेवरी समाज को मीठे सपनों में सुला देने वाली कोई गोली नहीं जिसे आसानी के साथ निगला जा सके. बल्कि कसैली बे स्वाद गोली की तरह रुग्ण मानसिकता पर प्रहार करती हुई समाज को एक स्वस्थ पुष्ट चरित्र प्रदान करती है.

तेवरी बसंत के उन्मादक रूप नहीं निहारती, बल्कि उस पर टिकी आशाओं, सम्भावनाओं, विश्वासों के साकार रूप की नींव डालती है.

तेवरी शांत जल के ऊपर बिहार करते हुए हंसों के सौंदर्य को नहीं निहारती बल्कि बहेलिये के तीर से घायल हंस की आंखों में छुपी वेदना को टटोलती है.

तेवरी नारी को साकी के रूप में नहीं चाहती, बल्कि स्वार्थी समाज द्वारा उत्पीड़ित, शोषित और छली हुई नारी की पीड़ा को अभिव्यक्ति देती है.

तेवरी किसी शराबी के संचालन, परिचालन पर ध्यान केन्द्रित न कर, अपना सारा सोच उसकी विकृतियों पर लगाती है.

तेवरी शमा और परवाने की दास्तान कहने में विश्वास नहीं रखती, बल्कि गांव और शहर के बूढ़े निर्धन रामू काका के चेहरे पर आयी झुर्रियों का इतिहास बताती है.

तेवरी किसी एक आदमी का आत्मालाप नहीं, बल्कि उस भीड़ का बयान है जिसे रोजी, रोटी और नीड़ की तलाश है.

तेवरी उन हाथों को प्यार और सहानुभूति से निहारती है, जिन पर मेंहदी रचने के बजाय छाले रच जाते हैं.

तेवरी चांदनी में नहायी हुई नारी को देखकर प्रफुल्लित नहीं होती, बल्कि लू में तपते हुए जिस्म को देखकर दुखी अवश्य होती है.

तेवरी गुलाबी होठों का रसपान नहीं, दवा के अभाव में दम तोड़ते हुए खुश्क होठों का भान है.

तेवरी बलत्कृत नारी के नंगे तन को देखकर मुंह बिचका कर नहीं चलती, बल्कि अपने तन का एक अदद वस्त्र भी उतार कर उसका नंगा जिस्म ढाँप देती है.

तेवरी चीते की चपलता और सौन्दर्य का बयान नहीं करती बल्कि उसकी विश्वासघाती प्रवृत्ति को उजागर करती है.

तेवरी इस आदमखोर व्यवस्था के प्रति क्रान्तिकारी सिद्धान्तों के व्यावहारिक रूप को अमली जामा पहनाती है.

तेवरी शीशे के मसीहाओं पर सच्चाई का एक पत्थर उछालती है.

तेवरी आगे बढ़ती हुई सेना के जोश का बयान नहीं बल्कि धरती की सूनी होती हुई गोद का क्रन्दन है.

तेवरी सामाजिक यथार्थ और चेतना के आग्रह का स्वर है.

तेवरी अत्याचारी के खंजर से टपकती हुई एक-एक बूंद का हिसाब मांगती है.

तेवरी स्वस्थ, शोषण विहीन समाज की अनिवार्यता है. और यही तेवरी का सौन्दर्य है.

—टीकाराम बिल्डिंग, आगरा रोड
अलीगढ़—२०२००१

Scanned by CamScanner

तेवरी यथार्थ के दर्पण में

योगेन्द्र शर्मा

कविता कभी भी इतनी सामयिक नहीं रही जितनी कि आज. आज की कविता पहले की तरह आकाश में उड़ने का प्रयास न करके जमीन से जुड़ने का प्रयास करती है. आज की कविता समाज को उसका चेहरा दिखाती है, उसके चिंतन का, उसके चरित्र का लेखा-जोखा प्रस्तुत करती है. कभी जन-सामान्य की पीड़ा बन जाती है तो कभी इस कुव्यवस्था के घने अन्धकार में आशा की एक नन्हीं किरण.

तेवरी नाम है-उस तेवरयुक्त छन्दबद्ध कविता का जिसमें आकाश की बात न हो माटी सुगन्ध हो. जिसमें पाउडर या सेंट की सुगन्ध न होकर किसी श्रमिक का पसीना है. तेवरी जनमानस की भावनओं की सरल अभिव्यक्ति है. वह नहीं चाहती कि जब जनसामान्य कभी कविता पढ़े तो शब्द और अर्थ की क्लिष्टता में खोकर रह जाय. आज कल नितान्त वैयक्तिक सोच की कविताओं की बाढ़ सी आ गयी है. कविता को चन्द साहित्यिक सेठों बनाम लेखकों की मानसिक अय्याशी बना देने का कुचक्र रचा जा रहा है. तेवरी कविता और जन—सामान्य के बीच पैदा हुई खाई को पाटना चाहती है. तेवरी उन कविताओं का विरोध करती है. जिन्हें पहेली का पजामा पहना दिया जाता है. शब्दजालों का सृजन कर संप्रेषण का गला घोंट देना तेवरी का स्वभाव नहीं है. वह निन्दा करती है छायावादियों की 'शैडो फाइटिंग' की. जब आदमी ही मर रहा हो तो पेड़—पौधों से बातें करना, हालात का मजाक उड़ाना नहीं तो और क्या है ? जिस कविता का साधक और साध्य सर्वसाधारण हो उसे ही तेवरी कहा जा सकता है. तेवरी उद्घोष है, आह्वान है, जेहाद है—

मैं आदम खोरों से लड़ लूं, तुझको चाकू बना लेखनी.
जो सरपंच बने बैठे हैं, उन पे ऊंगली उठा लेखनी.

—रमेशराज (अभी जुबां कटी नहीं पृ० ५०)

तेवरीपक्ष -3

पृ०-२१

क्रोध की मुद्रा बनाओ दोस्तो. जड़ व्यवस्था को हिलाओ दोस्तो
—सुरेश त्रस्त (अभी जुबां कटी नहीं, पृ० ४०)

इतिहास गवाह है कि मानव जाति के शोषकों की संख्या और शक्ति, शोषितों की सम्मिलित शक्ति और संख्या से बहुत कम रही है। अस्तु अपने उद्देश्यों की पूर्ति के लिये उन्होंने सदा छल और कपट का सहारा लिया. कभी भय और पाखंड के किलों में आम आदमी की चेतना को कैद कर दिया गया. तो कभी शोषितों में से ही कुछ लोगों को अपना पिट्ठू बनाकर स्वयं को जनता का, समाज का उद्धारक या मसीहा घोषित करा दिया गया. उत्पीड़ित जनता ने जब भी अपने पर हो रहे दमन का विरोध किया, उसे नये-नये शब्दजालों में उलझा दिया गया.

तेवरी जो जन्म से ही शोषितों की पक्षधर है, हर पाखन्ड और ढकोसले का विरोध करती है. वस्तुतः मानव बुद्धि की सीमा जहां समाप्त होती है वहीं से ईश्वर की सीमा प्रारम्भ हो जाती है, अर्थात् जहाँ से मानव चेतना लुप्त होने लगती है वहीं से ईश्वरत्व का अस्तित्तव शुरु हो जाता है. इसीलिए ईश्वर नाम का विचार इतना लचीला हो गया कि बुर्जुआ शोषक समाज ने इसे ही अपने शोषण का मूल आधार बनाया. तेवरी हर उस साजिश का विरोध करती है जो मानव-चेतना को सीमित करे, कुंठित करे. दृष्टव्य हैं कुछ तेवर—

लग रहा है आज हमको हर खुदा बहरा हुआ.
थक गये घंटे, सिसकती आरती अब देखिये.

—अजय अंचल (अभी जुबाँ कटी नहीं, पृ० १९)

टूटे मंदिर पे कोई नहीं फटकता है
पूजा और पूंजीवाद एक रंग है प्यारे.

—योगेन्द्र शर्मा (अभी जुबाँ कटी नहीं, पृ० २९)

इस देश की शिक्षा व्यवस्था उस लार्ड मैकाले की देन है जिसे अंग्रेजी राज्य के लिए कुछ क्लर्क चाहिए थे. उसे अपने राज्य के

Scanned by CamScanner

लिए ऐसे मिट्ठुओं की जरुरत थी जो तन से भारतीय हों और मन से अंग्रेज. आज के युवा को शिक्षा के नाम पर एक बना बनाया मिक्चर पिलाया जाता है. वर्षों की तपस्या के बाद उसे एक डिग्री मिलती है जिसका अवमूल्यन न कब का हो चुका है. रोजगार पर आधारित न होने के कारण अपनी शिक्षा का समुचित प्रयोग वह नहीं कर पाता. यह दिशाहीन शिक्षा प्रणाली ही है जिसके कारण वह अपनी शिक्षा पूरी करने के बाद अपने भाग्य को एक चोराहे पर खड़ा हुआ पाता है उसे यह ज्ञात नहीं होता कि उसे किधर जाना है. दिशाहीनता के ही कारण अनेक प्रतिभाएं कुंठित हो जाती हैं. आजकल एक युवा बेरोजगार जो पीड़ा झेल रहा है वह वर्णनातीत है. एक बेरोजगार युवक के हृदय में झांकते कुछ तेवर—

शहद लगाकर डिग्री को अब चाटिये श्रीमन
बेकारी की धूल यूं हीं फाँकिये श्रीमन्.

—योगेन्द्र शर्मा (अभी जुबां कटी नही, पृ० २६)

दर दर भटके शिक्षित यौवन,
कितना परेशान हैं भइया.

—अरुण लहरी (अभी जुबां कटी नहीं, पृ० ११)

आज जब हम सामाजिक यथार्थ की बात करते हैं तो एक शब्द हम भुला नहीं सकते और वह शब्द है-मंहगाई. बढ़ती हुई वैज्ञानिकता ने जहां जनजीवन को प्रभावित किया है, मंहगाई ने मानव-मुल्यों में ही फेर-बदल कर दिया है. आज की कमर तोड़ मंहगाई में पैसे की अंधी दौड़ मची हुई है. पहले एक कमाने वाला बीस-बीस को खिला लेता था, आज हर व्यक्ति को अपनी रोटी-दाल के लिए संघर्ष करना पड़ रहा है, मानव संस्कृति बदल चुकी है. घोर गरीबी में घर आया मेहमान भी मुसीबत दिखाई देता है. द्रष्टव्य है उक्त यथार्थ को दिखलाती तेवरी का एक तेवर-

एक मुट्ठी अन्न भी हमको नहीं होता नसीब,
आज कल मेहमान का सत्कार कोई क्या करे.

—अजय (अभी जुबां कटी नहीं, पृ० १८)

जहां बढ़ती हुई मंहगाई ने सर्वसाधारण को आर्थिक रूप से पंगु बना दिया है, वहाँ गिरती हुई कानून-व्यवस्था खौफ का कारण बनी हुई है. शाम के समय घर से बाहर हर नारी को अपने आभूषणों की अपने सम्मान की चिन्ता मन में लगी रहती है. दिन-दहाड़े भरे बाजारों में यहाँ तक कि न्यायालयों में, न्यायाधीश के सामने हत्याएं हो रही हैं. सामूहिक बलात्कारों, हत्याओं, डकैतियों की बाढ़ सी आ गयी है ? निःसंदेह अकारण नहीं ? क्या होगा उस खेत का जब उसकी मेंड़ ही उसे खाने लगेगी ? रक्षक ही भक्षक हो गये हैं. कानून के रखवाले ही या तो स्वयं कानून तोड़ते हैं या दूसरों को ऐसा करने लिए उकसाते हैं. थाने जो कानून और व्यवस्था के केन्द्र-बिन्दु थे अब नहीं, अपराध पलने लगे हैं. दृष्टव्य है उक्त यथार्थ को दर्शाती तेवरियों के कुछ तेवर–

१. चोरों के संग मिले हुये है, सारे पहरेदार सखी री.

—सुरेश त्रस्त (अभी जुबां कटी नहीं, पृ० ३५)

२. वाह रे जुर्म तुझे क्या कहिये
हाय थाने भी न छोड़े साहिब.

—योगेन्द्र शर्मा (अभी जुबां कटी नहीं, पृ० २०)

३. इस तरह उनके भरा साहस सभी में यार अब
हर शहर हर गांव डाके पड़ रहे हैं आजकल.

—अरुण लहरी (अभी जुबाँ कटी नहीं)

आजकल, एक ओर जहाँ हत्यारों की हत्याओं की, डकैतों को डकैतियों की, बलात्कारियों का बलात्कार की खुली छूट है, व्यापारियों को भी इस बात की छूट मिल चुकी है कि वह अपनी वस्तु मनमाने दामों में बेचकर अपनी तिजोरी भर सकता है. वस्तुतः इस देश में हर पांच वर्षों में आम चुनाव होते हैं और इन चुनावों में करोड़ों रुपया चन्दा एकत्रित किया जाता है. हर राजनैतिक पार्टी को अधिक से अधिक चन्दे की आवश्यकता महसूस होने लगती है और यह चन्दा इसी व्यापारी वर्ग से आता है. चुनाव में एक लाख रुपये चन्दे के देने के बाद वही व्यापारी दस–बीस लाख की चोरी

का हकदार हो जाता है. हर पूंजीपति को आजकल राजनैतिक संरक्षण मिला हुआ है और चोटी के पुंजीपति तो राजनीतिज्ञों की टकसाल बने हुए है. गरज यह है कि पूंजीवाद और राजनीति का गठबन्धन कभी इतना दृढ़ और उघड़ा हुआ नहीं था जितना कि आज. प्रस्तुत है इस यथार्थ को इंगित करते हुए कुछ तेवर—

१. वही छिनरे वही डोली के संग हैंप्यारे.
देख ले ये तो सियासत के रंग हैं प्यारे.

—योगेन्द्र शर्मा (अभी जुबाँ कटी नहीं, पृ० २६)

२. है हंगामा शोर आजकल भइया रे.
हुए मसीहा चोर आज भइया.

—सुरेश त्रस्त (अभी जुवां कटी नहीं पृ० ३६)

३. संसद में हैं लोग भेड़िए ये क्या मैंने सुना लेखनी.

—रमेशराज (अभी जुवां कटी नहीं पृ० ५५

यह भी एक सार्वभोमिक सत्य है कि जब दमन अपनी चरमसीमा पर होता है तो कहीं न कहीं विद्रोह की आग भडकती ही है. इस देश के वासी लाख डरपोक और सहिष्णु सही, कहीं न कहीं आक्रोश का ज्वालामुखी फूटता ही है. प्रस्तुत है उक्त तथ्य को उजागर करने वाले कुछ तेवर-

महाजनों को देता गाली, अब के होरी मिला लेखनी.
गोबर शोषण सहते सहते, नक्सलवादी ,बना लेखनी.

—रमेश राज (अभी जुबां कटी नहीं पृ० ५३)

देखकर आक्रोश सड़कों पर उतरता आजकल
कुर्सियां हिलने लगीं कुछ लोग घबराने लगे हैं,

—अरुण लहरी (अभी जुबाँ कटी नहीं, पृ० १५)

दरअसल साहित्य सृजन एक साधना का विषय है. जब-जब यह व्यावसायिकता से जुड़ जाता है, जब-जब यह जीविकोपार्जन से जुड़

Scanned by CamScanner

जाता है तब-तब साहित्य बिष से रिश्ता गांठ लेता है और यथार्थ से मुंह मोड़ लेता है. वह सरकार की लल्लो चप्पो करके पदक बटोरने में लग जाता है और एक भाट का चोला पहन लेता है. तालियों की गड़गड़ाहट से बहुत दूर, व्यावसायिकता से परे आज तेवरीकार ऐसे साहित्य के सृजन में लगे हुए है जिसमें हित की भावना हो, सत्य बोलने का जोखिम हो.

तेवरी समसामयिक परिस्थितियों की देन है, वस्तु यथार्थ की भाषा भी है. आज परिस्थितियां शोचनीय हैं. दमन और शोषण अपनी चरम सीमा पर है, इसीलिए तेवरी आक्रामक, जुझारु और सपाट बयान है. वह निरन्तर संघर्ष और निर्माण में विश्वास रखती है.

अंत में तेवरी के स्वरुप को स्पष्ट करते हुए कुछ तेवर—

गजल की बात नहीं ये कोई
है ये तेवरी के कोड़े साहिब.
योगेन्द्र शर्मा (अभी जुबां कटी नहीं, पृ० २७)

मजूर तेवरी, किसान तेवरी
गुलेल तेवरी, मचान तेवरी
ऋषभ देव शर्मा 'देवराज'

★—★

शुभ कामनाओं सहित—

त्रिवेदी प्लास्टिक

उच्च कोटि के प्लास्टिक सामान के निर्माता

८१२, द्वारिकापुरी, अलीगढ़—२०२००१

तेवरी ही क्यों ?

(एक गत्यात्मक अध्ययन)

राजकुमार 'निजात'

तेवरी एक कविता है, मगर कविता तेवरी नहीं है. आज हिन्दी कविता जिस जगह, जिस स्थिति में है, इसके अध्ययन के फलस्वरूप हमें ऐसा गौरव अनुभव नहीं होता, जैसा कि हमें होना चाहिए. कविता साहित्य की परिधि से निकलकर भौतिकवाद की ओर झुक गयी है. इसके लिये किसी प्रमाण की तह में जाने की आवश्यकता नहीं. भौतिकवाद से पनपे निकम्मेपन और सुविधा परस्ती ने हिन्दी कविता को दूषित कर दिया है. इस स्थिति ने जन्म दिया तेवरी को मगर तेवरी के उद्‌भव का यही मात्र कारण नहीं है. तेवरी उन त्रासद स्थितियों की देन है जो समाज में भ्रष्ट आचरण, नैतिक पतन, काला बाजारी व कुव्यवस्था आदि के रूप में व्याप्त है. यह आक्रोश की उग्रता गलत व्यक्तियों या वर्ग को साहित्यक भाषा में डांटती ही नहीं, फटकारती भी है और आवेश में उनके मुखौटे तक नोंच डालती है.

पिछले कई वर्षों से कविता का यह आन्दोलन किसी न किसी मंच से मुखरित होता रहा है और तभी से यह प्रश्न उठते रहे हैं कि तेवरी की काव्य विधा गजल का ही एक रूप है. इस भ्रान्ति को व्यावहारिक रूप से हल करने के लिये अनेक प्रकाशन सामने आये हैं. डा० देवराज व देवराज की पुस्तक 'तेवरी' की भूमिका में तेवरी को जिन सारगर्भित शब्दों में परिभाषित किया गया है. अर्थ पूर्ण है.

चूंकि गजल विगत दो तीन दशकों से जन-जन की जिस प्रकार चहेती बनी. उससे तेवरी प्रणेताओं को तेवरी तेवरान ढंग से व्यक्त करने के लिये इसके अतिरिक्त कोई दूसरा माध्यम न था. यूं तो तेवरी को मूर्त रुप में आने से पूर्व भी पंडित रामप्रसाद 'बिस्मल', अशफाक उल्ला खां, साहिर कैफी आजमी, फैज अपने राष्ट्रवादी चिन्तन को गजल रूप में कहा किन्तु इससे गजल अपना अर्थ खोती चली गई अत: धीरे-धीरे यह महसूस किया जाने लगा कि आक्रोश की इस साहित्यिक जुबान की अपनी ही एक विधा की जरुरत है, जो

अपने नाम के अनुरुप हो. तेवरी शब्द ने इस आक्रोशमय अभिव्यक्ति को शीर्षक रूप में हल करते हुए साथक कर दिया.

आज काव्य की दूसरी विधाएं जिस पथ से गुजर रहीं हैं, ऐसा लगने लगा है कि आधुनिक समाज कविता नाम से उकता गया है. एक तो फूहड़ हास्य व्यंग्य ने कविता को इतना भ्रमित कर दिया है कि कुछ काली दासी (काली दासी नहीं). लोग हास्य कविता को ही कविता मानने लगे हैं. ऐसा यहां (सिरसा) हुआ भी, एक बार कवि सम्मेलन में अध्यक्ष ने हंसने-हंसाने को ही कविता कह डाला. साहित्य के लिये निस्संदेह या भावना-स्वप्न खतरनाक है.

कविता की अन्य विधाएं इस अर्थ प्रधान युग्र में अपने सार्थक मूल्य खो रही हैं तो चिन्ता का विषय बनना स्वाभाविक ही है. तेवरी विधा कविता की एक मशाल लेकर जब से अवतरित हुई है, लोगों ने समाज ने एक बार पुन: पुस्तक के पन्ने पलटने शुरू कर दिये है. क्योंकि कविता-साहित्य में अब तेवरी ही मात्र ऐसी विधा रह गयी है जो गजल के समान्तर चल सकती है और कवि के क्षोभ, कुंठा, विद्रूपता, संत्रास, आक्रोश, दम, उत्पीड़न, पताशा, असंतोष व विद्रोह को सही अभिव्यक्ति दे सकती है.

युवा कवि वर्ग (हृदय से युवा) जब समाज विक्षिप्तावस्था का वर्णन करता है तो दिशा देश सम्बन्धी ऐसे प्रश्न भी सामने आ जाते हैं, जिनसे सिद्धान्तहीन, भ्रष्ट समाज को उन ही की भाषा में झकझोरा जा सके. लेकिन सभ्य भाषा का परित्याग न कर बैठे.

तेवरी गाली नहीं देती, शब्द-वाण चलाती है, उस समाज पर जो कानून और अधिकारों का अनाधिकृत रूप से प्रयोग करते हैं जन-भावना को ठेस पहुचाते हैं. राष्ट्रीयता पर प्रश्न चिन्ह लगाते हुए संविधान के विपरीत जाते हैं तेवरी उनके खिलाफ पैने हथियार का काम करती है.

देवराज की भी यह मान्यता हैं कि नयी परिस्थितियों में कविता में नया व सार्थक परिवर्तन आना चाहिये. तेवरी इस सार्थक परिवर्तन क ठोस आधार हैं.

—काठ मंडी, सिरसा

★

Scanned by CamScanner

तेवरी : आन्दोलन की उपादेयता

—चरन सिंह 'अमी'

परिवर्तन प्रक्रिया के लिए मुख्यतः तत्कालीन परिवेश, माँग, परम्परा, मूल्य अधिक जिम्मेदार होते हैं. साहित्य के सन्दर्भ में कहें तो जब भी अभिव्यक्ति, समाजगत-आदमीगत नये आयाम तलाशती है वह पिछला पूरी तरह खंडित तो नहीं करती किन्तु बहुत हद तक उसे स्वीकारने में हिचकिचाती जरूर है. यह निर्विवाद रूप से स्वीकार्य होना चाहिए कि अभिव्यक्ति इस प्रचलित रूप में संकुचित होती जा रही है, समुचित रूप से अपनी बात नहीं कह पा रहीं है. या यूं कहें कि अब उसको नये अर्थ सदर्भ या मूल्य को अभिव्यक्ति देने में वर्तमान प्रचलित रूप असमर्थ है. बहरहाल यहीं से परिवर्तन की माग उठने लगती है जो निरंतर किसी स्थापना की ओर अग्रसर रहती है.

गजल का अपना एक कोण रहा है. वह दायरों में बंधी रहे, आवश्यक नहीं है. किसी भी विधा के लिए यह जरूरी शर्त भी है कि वहदायरे तोड़े. किन्तु गजल को दायरे में बांधकर रखा जाना हो श्रेयस्कर साबित नहीं हुआ. हालांकि उसकी छटपटाहट महसूस की जाती रही. प्रेमी-प्रेमिका की सांसों के दरम्यान टकराने वाली गजल प्रेमिका के जूड़े में गुलाब की तरह खुसती रही. किन्तु जब वह वहीं उलझकर रह गयी तो उसे किसी ने भी बाहर निकालने की कोशिश नहीं की लगता है. गुलाब की जगह यदि तेवरी ने आकर किलप पोंस दिया तो इसमें जूड़े की सुन्दरता घट तो गई शायद. किंतु क्या जुड़े को और अधिक सुहढता नहीं मिली ? कभी-कभार यह पिन सिर के भागों में चुभ भी गई यदि तेवरी को इसी अतिक्रमणकारी

Scanned by CamScanner

प्रवृत्ति में देखें तो उसके सन्दर्भ में तमाम बातें वाजिब ठहरती है. तेवरी को इसी जुर्रतबाजी के कारण ही गजल के कुछ हिमायतदार तेवरी को इतने सीधे स्वीकार नहीं कर रहे हैं. दूसरी ओर इतनी क्षमता वे स्वयं में पैदा भी नहीं कर पाये हैं कि प्रेमिका के जुड़े में गुलाब को जगह क्लिप खोंस दे, फिर खोंसे तो चुभा दें. वैसे भी वे प्रेमिका को कल्पना जोवी मानकर ही अपनी भावानाएं प्रकट करते रहते हैं.

तेवरी, अपने अपने निजी तेवर हैं. अपनो-अपनो बौखलाहट है. आज बौखलाया टूटा हुआ आदमी यदि अचानक मुंहफट हो जाए, मारने के लिए ईट उठा ले, अधिकारों के लिए सीधे-साधे गाली गलौच पर उतारू हो जाए और चीखे तो इसमें हमें गरियाने की जरूरत क्या है ? गजल के हिमायती यह क्यों देखते हैं कि वह क्या चिल्ला रहा है ? यह क्यों नहीं देखते कि वह क्यों चिल्ला रहा है ? असल में बहस का मुद्दा भी यही दूसरी बात होनी चाहिए। इसमें उलझने से हमें कुछ नहीं मिलेगा कि तेवरी नयी विधा है. इसकी स्थापना होगी या नहीं ? परिभाषा और मुख्याधार क्या हो ? क्या तेवरी युगबोध पूरी तटस्थता से देखेगी ? ये मुद्दे बड़े हैं इन पर तत्काल बहस करने की कतई आवश्यकता नहीं है. बहस तत्काल इस पर की जानी चाहिये कि तेवरी को हम इतना जरूरी क्यों महसूस कर रहे हैं. आज के संदर्भ में उसके लिए हम कितनी रचनात्मक ऊर्जा चुका रहे हैं.

बहरहाल तेवरी को सजग आन्दोलन का रूप दिया जाना नितांत अपेक्षित है. 'तेवरी पक्ष' निकालकर अलीगढ़ से रमेशराज व साथियों ने दुस्साहस किया है एक कड़वा सच सामने पड़ा है. तेवरी काफी देर से सामने आयी. खैर ! देर आयद दुरुस्त आयद !

तेवरी आन्दोलन की पृष्ठभूमि पर परोक्ष स्पष्टता की शर्त होना आवश्यक है हमें सैद्धान्तिक तौर पर इस बात को स्वीकारने में कतई दिक्कत नहीं होना चाहिए कि आन्दोलनों से साहित्य समृद्ध होता है. और उसके विकास को गति मिलती है. वैचारिक मतभेद और विरोध के वातावरण में रचनाशीलता को एक नया निखार हासिल होता है.

Scanned by CamScanner

साहित्यक गतिरोध और जड़ता को तोड़कर वह जिन्दगी के और करीब आता दिखायी देता है. लेकिन यह आन्दोलनों का केवल एक पक्ष है और ऐसा तभी मुमकिन होता है जब किसी आन्दोलन के आधार-भूत वैचारिक आग्रह बहुत स्पष्ट हों और उस वैचारिकता के रचनात्मक प्रतिफलन की दृष्टि से भी वह एक सुदृढ़ आधार पर खड़ा हो। अत: जरूरी है कि वैचारिक ग्राह्यता और रचनाशीलता के प्रति तेवरी को काफी सजग रहना होगा. उधर तेवरी की पृष्ठ भूमि को भाई रमेश राज स्पष्ट करते हुए अपना मत प्रकट करते हैं उनसे यह तो आभास हो जाता है कि तेवरी का वैचारिक आग्रह बहुत कुछ युवावर्ग से ही सम्बन्धित है उग्रता, तत्परता, निरंतरता, नकारने की दृढ़ता, कुंठा को काट फेंकने की कोशिश का प्रतिफलन ही तेवरी है, समसामायिक वातावरण की आवश्यकता के साथ ही साथ परिस्थितियों की दोहरी मांग ने तेवरी को जन्म दिया हैं इन परिस्थितियों को उभारने में तेवरी का लक्ष्यबेधित रहा है. खासकर राजनीतिपरक दुर्गंधता. इस वैचारिक आग्रह के साथ गजल होने के खतरे हैं. जो चुनौती स्वरूप खड़े हो सकते है. आशा गुप्ता की मानना के अनुसार शिल्प के स्तर पर आयी साम्यता विवादास्पद नहीं है किन्तु यदि वैचारिक स्तर पर तुलना कीं जाए तो समकालीन गजल और तेवरी में बहुत कुछ साम्यता है परिवेश को स्वीकारने में आज गजल भी सामर्थ्यवान है किन्तु तेवरी से उसकी वही भिन्नता है जो एक कहानी और सत्यकथा (अपराध कथा) में है कहानी का वैचारिक परिवेश और अपराध कथा का वैचारिक परिवेश जितना भिन्न है उतना ही गजल और तेवरी का. गज़ल के मुकाबले तेवरी के लिये एक सीमा काम करती हैं. तेवरी गजल में घुस सकती है, किंतु गजल का तेवरी में घुसना अतिक्रमण होगा जो नकारात्मक होगा. बजह यही है कि तेवरी में सब कुछ होते हुए भी आक्रोश जनित वैचारिक आग्रह होना चाहिए. जबकि गजल में इस तरह की शर्तें जरूरी नहीं है. अपने जन्मकाल से गजल ने रंगीनियों की वृद्धि की है इस हेतु वह तेवरी के एकदम निकट होते हुए भी बहुत दूर है, अंतरंगता के नाते से.

डा० हरिमोहन कहते हैं तेवरी नाम की सार्थकता विवादास्पद है. 'अगजल' भी ऐसा ही तथाकथित आंदोलन था — हिन्दी कविता

Scanned by CamScanner

भी तो प्रारम्भ से ही दरबार की चीज रही है. क्या कविता को दरबार की चीज मानकर कुछ कहना होगा ? कविता को दरबार की चीज मानकर यही कहा जा सकता है कि तात्कालीन सामाजिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक परिवेशगत परिस्थितियों का अवलोकन एक बार पुनः कर लिया जाय. क्योंकि लेखन का समकालीन संदर्भों के साथ रखकर ही मूल्यांकित/रेखांकित किया जाना श्रेयस्कर होता है. फिर यदि आप यथार्थवाद से प्रभावित होने की अपेक्षा रखते है. लिखते हैं तो चौराहे पर हुए दंगे मे एक-दो-चार लाठियां झेलकर ही दंगे की भयावहता, प्रतिक्रिया आतंक की सार्थक अभिव्यक्ति अधिक सशक्ता से कर सकते हैं. अपनी प्रेमिका के करीब बैठकर प्रेम प्रसंग करते हुए दंगे के लिए पृष्ठ रंगना यदि कोई सजग समीक्षक उचित ठहरा देता है तो तेवरी की अपेक्षा गजल को अधिक सशक्त विधा मानने में मुझे कोई हिचक नहीं होगी. कुल मिलाकर स्थिति यह हो जाती है कि विधा का महत्व रेखांकित करने के पूर्व बिधा के उपजने की मजबूरी की ओर ध्यान दें. यहां यह भी उल्लेखनीय होगा कि भाई रमेशराज का तेवरीं के लिए तत्कालीन कवियों जैसे तुलसी, बिहारी, घनानंद वगैरह-वगैरह को दोषी ठहराने का का नजरिया उपयुक्त नहीं है. तेवरी को महत्ता प्रतिपादित करते समय यह सोचना बहुत जरूरी है कि हमें इतिहास लिखना है, पुनरावृत्ति नहीं करना है. दिल्ली प्रेस की भांति हिन्दी काव्य के आधार स्तम्भों का मखौल नहीं उडाना है. इस तरह के नजरिए साहित्य को, विधाओं को कहीं नही ले जाते, वरन् पीछे धकेल लाते हैं और व्यर्थ ही अप्रिय विवादों के कटघरे में ला खड़ा करते है.

साथ ही हम कदापि यह नहीं भूलें कि अपने सामाजिक, राजनीतिक विचारों और समूची मानसिकता को उसकी सार्थकता के सन्दर्भ में रेखांकित किए बिना किसी नये आंदोलन की अगुआई की महत्त्वाकाँक्षा आज दुर्भाग्यपूर्ण ही समझी जानी चाहिये. वरना कुछ खतरे पैदा भी होते है. बहरहाल इस तरह के दौर से गुजरने के पहले यह जान लेना भी जरूरी है कि इसके पीछे कितनी सर्जनात्मक ऊर्जा हमें निरंतर देना हैं, वरन् कुछ लोग इस बहाने भी अपनी रोटी सेंककर खाते हुए बाजू से गुजर जायेंगे. और हम फिर भूखे ही रह जाने के

लिए मौजूद रह जायेंगे. जो लोग हर आंदोलन के साथ हो लेने की सुविधा जनक स्थिति में होते है वे वस्तुतः किसी के भी साथ नहीं होते स्वंय अपने साथ भी नहीं. और समय का एक बहुत छोटा-सा टुकड़ा भी इस बात को खूब अच्छी तरह स्पष्ट कर देता है कि ऐसे लोगों के साथ किस किस्म का सलूक होना चाहिये. तेवरी के पीछे भी साजिशों का उद्भव होगा, इसमें दो राय नहीं. किंतु इसके लिये स्वय हमें तैयार होना होगा कि हम समय का एक बहुत छोटा-सा टुकडा भी इनके लिए अवश्य निकालें जो मधुरेश के अनुसार अपने किस्म का सलूक करेगा. जो लोग अभी से संदेहास्पद बयान दे रहे हैं, उनपर क्या विश्वास किया जाय कि वे तेवरी के संक्रमण काल में हमें तोडेंगे नहीं वस्तुतः ऐसे किसी भी किस्म के निराशावादी दष्टिकोणों और उनके प्रेरकों को बाजू से गुजर जाने के लिए भी हमें एक गली सुरक्षित रखना होगी. बहरहाल इस तरह के अपच्च कथ्य विवाद हमारे सामने न आए ऐसे प्रयास होना चाहिये. किन्तु यदि आ भी जाय तो उसे ह[illegible] लेने की क्षमता हममें होना चाहिए. इस जरा से अपच्य की खातिर हम अपने भरे पूरे पेट को लेकर किसी डाक्टर के पास जाएं और पचवायें, इससे बेहतर है कि अपच्य को खुद ही नकारें, किन्तु शालीनता की सीमा में.

उप सम्पादक—लघु आघात
विवेकानद छात्रावास, बड़ा रावला
जूनी इन्दौर—इन्दौर—४५२००४

संदर्भ—

(१) सक्रिय कहानी: कितनी सक्रिय और कितनी कहानी/मधुरेश/साक्षात्कार-१४ दिस० ७९ से फर० ८०/ पृष्ठ १२२

(२) तेवरी पक्ष—दो (सं०—रमेशराज)डॉ० हरिमोहन/पृष्ठ ३

(३) अभी जुबाँ कटी नहीं (सं० रमेशराज)/ पृष्ठ भूमि से/

(४) मधुरेश /(साक्षात्कार वही/पृष्ठ—१२४

(५) मधुरेश/ वही/ पृष्ठ-१२९

★

Scanned by CamScanner

तेवरी : एक नया काव्य-वाद

—विशन कुमार शर्मा

हिन्दी भाषा के साहित्य में कविता ही ऐसी विधा है, जिसमें सर्वाधिक '-वाद, बने हैं. इस विषय में हिन्दी काव्य के '-वादो' को खोज-खोजकर लिखने वाले इतिहास लेखक ही धन्यवाद के पात्र हैं कि उन्होंने सभी का उल्लेख नहीं किया. प्रसिद्ध-'वाद' ही चर्चा के विषय बनाये. अप्रसिद्धों को छोड़ दिया. वरना बहुत बड़ा बखेड़ा खड़ा हो जाता. हिन्दी का पाठक इन्हें कैसे याद रखता ? फिर भी इतने 'वाद' हैं कि वह उनको ही याद रखने के लिए परेशान है. यूरोप में भी एक समय ऐसा था, जब 'रहस्यवाद, कलावाद, व्यक्तिवाद आदि अनेक 'वाद' प्रचलित हुए थे. वे अब वहां मरे हुए आन्दोलन समझे जाते हैं. वहां इन विभिन्न वादों से ऊबकर लोग खुली हवा में आना चाहते हैं. अब कुछ ऐसी ही दशा में हैं. खैर-अब एक और नया काव्यवाद आपकी सेवा में हाजिर है. इसकी प्रसिद्ध और अप्रसिद्धि का निर्णय तो समय करेगा. क्योंकि काल ही साहित्य के सही और उचित मूल्यांकन की सर्वाधिक महत्वपूर्ण कसौटी है.

श्री रमेश 'राज' ने कविता के क्षेत्र में एक विशेष प्रवृत्ति को लेकर कविता-सृजना करना आरम्भ किया है और उसका नाम रखा है-तेवरी. वे 'तेवरी' को विधा कहते हैं—

"सामाजिक, राजनीतिक विकृतियों के प्रति तिलमिलाते तेवरों के आधार पर हमने तेवरी को काव्य की एक विधा के रूप में स्वीकारा है." (तेवरी पक्ष, पृ०१)

सबसे पहले तो यही निवेदन है कि 'तेवरी' कभी 'विधा' नहीं कहला सकती, वह निश्चित ही 'वाद' संज्ञा के अंतर्गत रखा जायेगा.

साहित्य में 'विधा' और 'वाद' प्राय: सुने जाते हैं. 'विधा' शब्द

तेवरीपक्ष -3

पृ० ५२

Scanned by CamScanner

का मूल अर्थ 'विशिष्ट पद्धति से बनी हुई' है. अतएव साहित्य में विधा का निर्धारण रूप-रचना, विशेष रूप से लेखन-पद्धित और भावों-विचारों के विशेष पैटर्न से होता है. उपन्यास, कहानी, निबंध, कविता (काव्य), गद्य-काव्य आदि साहित्य की विधाएँ हैं. और इनमें आपसी अंतर रूप-रचना, लेखन-पद्धति और भाव-विचारों की उपस्थापन रीति का ही है.

मूलतः साहित्य की दो शाखायें है-(१) गद्य साहित्य (२) पद्य साहित्य. और इन शाखाओं की उपर्युक्त कई विधायें हैं.

कभी-कभी विधा भी कई धाराओं में विभाजित होती है. जैसे कि काव्य की दो धारायें स्रावित हुई—प्रबंध और मुक्तक.

विधा के पश्चात् विधांग आते हैं. मान लीजिए कविता एक विधा है, तो विधांग हैं-गीत, क्षणिकाएं, हँसिकायें, आदि. प्रबन्ध कविता को वृहद् गीत के अन्तर्गत रखा जा सकता है और मुक्तक काव्य को लघु गीत के गीत-अर्थात् जो गाया जाए. प्रबन्ध काव्य गाया जाने के कारण गीत ही है. मुक्तक काव्य भी गाया जाता है, तो वह भी गीत है. गाये जाने के कारण अन्य प्रकार के काव्यवाद भी गीत कहलाय हैं. इस प्रकार गीत का क्षेत्र बहुत विस्तृत है. वेदमंत्र भी गात ही हैं.

अब आती है 'वाद' की बात. कविता के विषय में ही नहीं वरन् साहित्य की प्रत्येक विधा में '–वाद' का निर्धारण विधा की धारा के आंतरिक लक्षणों और विशेष रूप से उसकी प्रवृत्तियों के आधार पर है. कविता के संदर्भ में ये प्रवृत्तियां कलापक्ष और भावपक्ष दोनों के आधार पर बनती है.

'तेवर' का शाब्दिक अर्थ है—क्रोध भरी चितवन. काव्य के साथ इसका अर्थ—क्रोध या विद्रोह भरी कथन भंगिमा माना जा सकता है.

श्री रमेश 'राज' के खेमे के कवियों के 'तेवरी' काव्य को पढ़ने से यह अवश्य लगता है कि उसमें सामाजिक और विशेष रूप से राजनीतिक विकृतियों के प्रति विद्रोह की भावना की प्रतिष्ठापना ही अधिक

है. और उन कवियों के उस विद्रोह की अभिव्यक्ति गजल की शैली में हुई है.

कुछ लोग 'गजल' की धारा को केवल प्रेमिक-श्रृंगार से जोडते हैं. प्रमुखत: गजल के मूल में गजाल (हिरन का बच्चा) शब्द है. गजल उस कराह को कहते है. जिसे एक गजाल (हिरन का बच्चा) शिकारी का तीर लगने पर अपनी बेबसी में निकालता है. इसलिये गजल नामक काव्य-रूप में दुनिया की नापायदारी और दर्दमंदी का जिक्र किया जाता है. इस तरह गजल में मूलत: करूण, श्रृंगार और शान्त रसों की प्रधानता रहनी चाहिए. हिन्दी की आधुनिक गजलों में शान्त रस की बात अधिक है. कतिपय गजलगो शान्ति के माध्यम से समाज और राजनीति की विकृतियों का पर्दाफाश आज भी कर रहे हैं.

उक्त कथन के माध्यम से मैं यह तो नहीं कहना चाहता कि 'तेवरी' वास्तव में गजल है. नहीं, उसमें गजल की शैली आंशिक उतारी अवश्य गयी है. हमारा कहना इस विषय में इतना ही है.

उर्दू काव्य का जन्म विलासिता और वैभव के किलों में हुआ था. वहां महलों की खनक में ही वह पला था. इसलिये पहले-पहल गजल में श्रृंगार रस अधिक रहा. बाद में समय बदला और वातावरण बदला तो गजल की रस-धारा भी परिवर्तित हुई और उसकी प्रवृत्तियां भी बदलीं.

तेवरी' का उद्भव एक ऐसे समाज की देन है, जिसको विशेष रूप से राज-नेताओं ने सताया है. जैसे-कोई स्वतंत्र सिंहों की वनस्थली में मदमस्त हाथी अपना प्रभुत्व स्थापित करना चाहे. लोकतंत्र का प्रत्येक मानव स्वतंत्र सिंह है. और नेता मदमस्त हाथी. उसका प्रभुत्व तभी तक है. जब तक कि चुनाव का चपेटा लोकतंत्र के मानव रूपी सिंहों के द्वारा मदमस्त हाथी के कानों पर नहीं पड़ता.

'तेवरी के कवि इस 'चपेटे' को नेता के कानों पर बुरी तरह से पड़वाने की तैयारी कर रहे हैं. एक प्रकार से तेवरी का सबसे प्रबल पक्ष शोषक वर्ग पर कुठाराघात करना ही है.

यद्यपि अन्य कुछ सामाजिक पक्ष भी 'तेवरी' के अपने मूल मुद्दे हैं हिंसा, बलात्कार, मुनाफाखोरी भी इसकी विशिष्ट प्रवृत्ति को द्योतित करते हैं. और इन सबके मूल में हैवानियत को खरोदने वाला वह नेता ही है.

सच्चा काव्य या साहित्य हमारे समाज का, हमारी राजनीति का और हमारी प्रशासन-पद्धति का वास्तविक शब्द-बिम्ब खड़ा करता है. जिस देश की सामाजिक व्यवस्था जैसी होगी, राजनीतिक प्रपंच और प्रशासनिक चालें जैसे होंगी साहित्य उनका वैसा ही रूप प्रस्तुत करेगा. आज हमारा समाज, हमारी राजनीति आदि जैसी बन गई है, उसे आज के स्वतंत्र साहित्यकार के द्वारा ठीक उसी रूप में चित्रित किया जा रहा है. गत पिछले पांच वर्षों से कवि सम्मेलन-मंचों से लेकर लिखित काव्य कृतियों में हमको एक ही पीड़ा. एक ही घुटन सुनने को मिल रही है. वह पीड़ा या घुटन है सामाजिक और विशेष रूप से राजनीतिक विकृतियों से सताये गये व्यक्ति की.

किसी पाश्चात्य साहित्यकार ने कहा था कि साहित्य समाज का दर्पण है. वास्तव में आज का साहित्य विशेष रूप से 'तेवरी' साहित्य आज के समाज का दर्पण है. उसमें आज के मुखौटेबाज समाज के, चेहरों को साफ-साफ देखा जा सकता है.

साहित्य की उपयोगिता के संदर्भ में मूल बात ध्यान देने की यह कि साहित्यकार के द्वारा जो रचना—काव्य उपन्यास, कहानी, नाटक आदि के नाम -समाज को दी जा रही है, उसमें हमें देखना है कि मनुष्य को पशु सुलभ धरातल से उठाकर उदात्त रास्ते पर ले जाने की क्षमता है या नहीं. यदि ऐसी क्षमता उसमें हैं. तो वह साहित्यिक कृति है. यदि ऐसी क्षमता उसमें नहीं है तो वह कोरा वाग्जाल है. वह निरर्थक है. उसे हम साहित्यिक कृति कभी नहीं कह सकते।

वास्तव में तेवरी' की कविताओं में कुछ-कुछ यह शक्ति निहित है कि वह विकृत समाज और विकृत राजनीति को ठीक कर सकेंगी. बात को कहने की उनमें तीखी व्यंजना शक्ति भी निहित है.

—१३/१४, सराय बारहसैनी,
अलीगढ़ ।

★

Scanned by CamScanner

॥ तेवरियां ॥

एक

मौसम बड़ा उदास है अब तेवरी कहो
पीड़ा के आस पास है अब तेवरी कहो.

अंकुराई फुनगियों की फसल पर तुषार है
कुचली हुई सी घास है अब तेवरी कहो.

गमलों के गीत गा रहे गायक बहार के
बीमार-सा मधुमास है अब तेवरी कहो.

कोयल की कूक हूक हुई, कलियां मूर्छित
फूलों की बिछी लाश है अब तेवरी कहो.

श्रंगार विरह की, शराबो शबाब की
हर चर्चा बकवास है, अब तेवरी कहो

— गिरि मोहन गुरू

दो

बन रहे हैं ऐसे कुछ आधार भइया रे !
देश के मिटने के हैं आसार भइया रे !

ये जात, ये मजहब, ये मेरा, ये तुम्हारा
करते हैं लोग इस पर ही तकरार भइया रे !

जो बेगुनाह हैं वे सलीबों पे टंगे हैं
आजाद घूमते हैं गुनहगार भइया रे !

राजीव मेरे देश में ये हो रहा है क्या ?
कब तक रहेगी बहरी यूं सरकार भइया रे !

— राधे गोविन्द 'राजीव'

तीन

फिर हमें सौगात में वो सुबकियां दे जायेंगे
हम तो फिर सो जायेंगे वो थपकियां दे जायेंगे.

सोख कर ले जायेंगे ताजे गुलाबों का लहू
सिर्फ वादों की सुनहरी तितलियां दे जायेंगे.

एक काली रात में हमदर्द बनकर दोस्तों !
फिर किसी उजली सुबह को अस्थियां दे जायेंगे

फिर वो आयेंगे हमारे पास मुस्काते हुए
दिल में जख्मों की सुलगती बस्तियां दे जायेंगे

जिनको ढोना ही पड़ेगा जिन्दगी की शाम तक
ऐसी कांधों पे हमारे अर्थियां दे जायेंगे

इस तरह तुम जब कभी सैलाब में घिर जाओगे
हाथ में वो कागजों की कश्तियाँ दे जायेंगे.

—अजीज आजाद

चार

दूर भागी चमन से चहचहाहट किसलिये ?
गुम हुई तारीकियों में जगमगाहट किसलिये ?

जिन चुने बेहूदा लोगों के हैं हाथों में निजाम
बस उन्हीं चेहरों पे बची मुस्कराहट किसलिये ?

बोझ बनती जा रही है यह व्यवस्था देश पर
कुछ न कुछ कर डालिए, यूं तिलमिलहाट किसलिये ?

जो भी कहना है कहो सड़कों पे आकार दोस्त !
पार्श्व में दीवार के हैं फुसफुसाहट किसलिये.

'साज' से इस दौर में यूं इश्क की बातें न कर
तेवरी के वक्त फिल्मी-गुनगुनाहट किसलिये ?

—ज्ञानेन्द्र 'साज'

पांच

कातिलाना ढंग से वे मुस्कराये हैं
जब कभी भी लौट कर दिल्ली से आये हैं.

इन झुग्गियों को भी शायद पेरिस बनायेंगे
बड़े अन्दाज से बुलडोजरों के संग आये हैं

लब सिला कर कर रहे आदेश का पालन
इस भीड़ में भी सब हरे चश्मे लगाये हैं

उपलब्धियों के जब कभी होने लगे चर्चे
सीना फुला आकाश के तारे गिनाये हैं.

इस शहर की मानसिकता और बदलेगी
इस शहर के टुकड़ों में नक्शे बनाये हैं.

—चरणलाल चरण

छह

आज घिरा समस्याओं में अवाम देखिए
पर 'उनकी' है खुशनुमा हर शाम देखिए.

सुबह प्रामिज, रात वादे, शाम आश्वासन
देशोन्नति का यूं करें वे काम देखिए.

जन-आक्रोश का परचम उन्हें नहीं दिखता
इधर पंजाब, उधर जलता आसाम देखिए.

अतीत गया, वर्तमान भी टूट रहा है
भविष्य का हो क्या अब अंजाम देखिए ?

महसूस हो न हो, मगर गौर कीजिए
हाथों में आपके हैं खूनी-जाम देखिए.

—टी० महादेव राव

Scanned by CamScanner

सात

रोटी सबकी जान सखी री !
रोटी तन मन प्रान सखी री !

नंगे भूखों की बस्ती में
रोटी है भगवान सखी री !

चला चली के इस मेले में
रोटी पकड़े कान सखी री !

स्वामी सेवक दोनों ही की
रोटी है पहचान सखी री !

नाच सभी को नचा रही है
रोटी है शैतान सखी री !

——रमाकांत दीक्षित

आठ

छेद देंगे वक्ष ये तीरों कमानों से
मांगिये मत न्याय वहशी बद्‌जबानों से.

मानिए आदाब या फिर जी हुजूरी के
हम नहीं अभ्यस्त कहदो हुक्मरानों से.

वे हमारे भाग्य के निर्णायकों में हैं
छूट कर आये हैं कल जो कैदखानों से.

वायु में आश्वासनों के पुल रचा करके
वे तबाही देखते हैं वायुयानों से.

गरदनें ये झुक नहीं सकतीं मसीहाओं !
बांध दो तुम चाहे तोपों के दहानों से.

——डा० अजय प्रसून

Scanned by CamScanner

'कबीर जिंदा है'
तेवरी संग्रह पर कतिपय पत्रांश

कलियों को खिलने का मौका देना, फिर सार्थक होकर खिलना ये दो अलग बातें हैं आपने इन दोनों उद्देश्यों को पूर्ण किया —— रास्ते पर रूकिये नहीं, अनवरत चलते रहिये —— पुस्तक को मेरे नाम उत्सर्ग करने लिये धन्यवाद.

—श्री मन्मथ नाथ गुप्त, दिल्ली.

मुझे यदि बड़ा भाई मानते हो तो उसी तरह मेरे पत्र को लेना —— 'कबीर जिन्दा है' को देखकर पूछ रहा हूँ—यह श्रम क्यों ? —— फकीरी के लिये मैं ही बहुत हूँ. तुम क्यों अपने आपको होमने पर तुले हो. तुम्हारी रचनाएं कमजोर हैं.

- श्री प्रकाश जैन, सं०—लहर, अजमेर.

मैं महसूस करता हूं-आपकी यह टोली मुल्क और अवाम के दुख दर्द में शामिल रहेगी. अपने छोटे प्रकाशन से आप बड़े प्रकाशन के जबड़े में फंसने वाले रचनाकारों को बचायेंगे.

—श्री जितेन्द्र राठौर, पटना.

पुस्तक न केवल पठनीय हैं. संग्रहणीय भी.

—श्री भगवती प्रसाद उपाध्याय, इलाहाबाद.

आपके प्रयास व विधा के लिये किये गये कार्य की सराहना करनी ही पड़ेगी.

— सम्पादक-खिले अधखिले, लखनऊ.

तेवरीपक्ष -3

पृ० ८०

संग्रह अच्छा है.

—श्री शराफत अलीखान, बदायूं.

अभी केवल शानदार कह रहा हूँ.

— श्री विक्रम सोनी.

इतने सारे तेवरीकारों को एक साथ देखकर प्रसन्ता हुई.

—श्री शिवकुमार थदानी, मुजफ्फरपुर.

कुछ रचनाएं निश्चित ही अच्छी और असरदार हैं.

—श्री चरणलाल चरण, खेतड़ी नगर.

अभी तक मेरे पास विभिन्न तेवरीकारों के पांच-छह संग्रह आ चुके हैं, निश्चित ही आपकी रचना धर्मिता व समझ बूझ को सर्वोच्च स्थान देता हूं—— फिर भी गंगाराम, सीताराम, होरीराम पाठक कब तक पढ़ते रहेंगे ?—— तेवरी से भविष्य और उद्देश्य पूर्ति का कोई सिल-सिला बना हो, ऐसा क्या आप महसूस करते हैं ?

—श्री आनन्द गोरे, विदिशा.

तेवरी पर आपका कार्य प्रेरणा देता है.

—श्री विजेन्द्र सिंह, सागर.

ये भ्रष्ट आर्थिक, सामाजिक, राजनीति ढांचे पर अपनीं पूरी ताकत से आक्रमण करती हैं.

– श्री डा० वी० एन० सिंह, कानपुर.

'कबीर जिन्दा है' सही समझ से उद्भूत तेबरियों का महत्वपूण संग्रह है.

—श्री शम्भू बादल, हजारी बाग.

निश्चित रूप से आज के यथार्थ को नंगा करने का एक साहसिक सार्थक प्रयास है.

— श्री हरीशंकर अग्रवाल, बुलन्दशहर

—०—

समीक्षालय

प्रतीक त्रै०) सम्पादक—शिवकुमार थदानी, प्रवेशांक—
अक्टूबर-८३, मूल्य-दो रुपये,
सम्पर्क-रामबाग, मुजफ्फरपुर-२

प्रवेशांक में सम्पादक द्वारा तेवरी विधा को जिन मान्यताओं में बांधा गया है उससे प्रतीत होता है कि सम्पादक की चिन्तन शक्ति अभी शैशव अवस्था में है. सम्पादक के वक्तव्य और रचना से ऐसा लगता है कि यदि उन्हें रोका न गया तो कपड़े फाड़ने लगेंगे अथवा सारे समाज को जलाकर राख कर देंगे. तेवरी के 'छह बन्धन' सम्पादक की अज्ञानता और उसके अपरिपक्व मस्तिष्क की उपज हैं. तेवरी में **गेयता के अभाव व उसकी मात्राओं के प्रति अनोखे, व तर्कहीन विचार** निस्संदेह तेवरी आन्दोलन को नुकसान पहुचायेंगे साहसी होना जहां एक गुण है वहीं दुस्साहसी होना एक अवगुण. माना तेवरी जनाक्रोश की अभिव्यक्ति है. किन्तु विध्वंस की नहीं. इसलिये सम्पादक महोदय का कर्तव्य हो जाता है कि अभिव्यक्ति की मर्यादा को जीवित रख.

सम्यक् दृष्टि से कुछ तेवरियों को छोड़कर एक निरर्थक निरुद्देश्य, व दिशाहीन प्रयास है.

तेवरीपक्ष-3 पृ० - 52

Scanned by CamScanner

अक्स (गजल संग्रह), नीतोश्वर शर्मा नीरज, पृष्ठ ७४ मूल्य २५)
प्रकाशक —मानव परिषद प्रकाशन, इमाम गंज, मुजफ्फरपुर.

किसी कविता का कथ्य या चरित्र उस समय की सामाजिक परिस्थितियों और आस पास के परिवेश के प्रभाव से उत्पन्न विचारों या भावों का सम्मिश्रण होता है. सामंती युग की कविता भी उससे मुक्त नहीं रही हैं जब अय्याशी खून बन कर रगों में दौड़ रही थी. उस वक्त कविता सामाजिक चेतना की मशाल नहीं, एक अय्याश की बदनसीब लौंडी थी. यह अन्त्यानुप्रास' से बंधी कविता मरमरी जिस्म, मख्मूर आँखें, खमदार जुल्फें व मस्त अंगड़ाइयों से भरा एक पिटारा थी, जिसे यथा नाम तथा गुण के कारण गजल के नाम से विभूषित किया गया गजल का कथ्य उस वक्त के प्रभाव से उत्पन्न विचार थे. धीरे-धीरे सामाजिक परिस्थितियों में परिवर्तन आया लोगों में चेतना के बीज अंकुरित होने लगे और गजल का मादक प्रभाव छंटने लगा. उसके कथ्य में परिवर्तन आने लगा. हुस्न की बेवफाई का स्थान महंगाई ने और अब शिकायतें महबूब से न होकर व्यवस्था से होने लगी. और आँखें खुमारी से नहीं आक्रोश से जलने लगीं. इसका तात्पर्य यह है कि यह एक प्रभाव था जो समय के साथ समाप्त होता गया. उसका स्थायित्व डिगने लगा. अब बिडम्बना यह है कि कथ्य चूंकि एक सामाजिक प्रभाव था. जो समय के साथ समाप्त हो गया. किन्तु इसकी नामावली गजल एक संस्कार के रूप में क्यों चिपकी हुई है ? फिराक गोरखपुरी की मान्यतानुसार—'विवशता का दिव्यतम रूप में प्रकट होना, स्वर का करुणतम हो जाना ही गजल का आदर्श है" किन्तु जब स्वर में कठोरता और आक्रोश हो, तब भी क्या गजल ही कहेंगे ? नहीं. जब चरित्र ही बदल गया तो इस नाम की सार्थकता कहाँ है ? यह तो सर्वथा गजल के आदर्श की अवमानना होगी. कल के मरुथल यदि लहलहाते खेतों में बदल जायें तो क्या मरुथल ही पुकारे जायेंगे ? छंदबद्ध और अन्त्यानुप्रास से प्रतिबन्धित इस विधा के साथ कुछ ऐसी ही त्रासदी है.

फिर भी —— प्रस्तुत संग्रह की गजलों में 'नीरज' द्वारा सामा-

जिक ढांचों से चिपकी विकृतियों को नोचकर फेंक देने का एक सार्थक प्रयास है. संग्रह की अधिकांश रचनाएं आदमी को रुढ़ियों, विसंतियों, बुर्जुआ मान्यताओं से मुक्त कराने के लिये अपनी आवाज बुलन्द करती हैं.

"मासूमियत लेटी है दरिन्दों की सेज पर
बिकती यहां इन्सानियत संसद की मेज पर.

× × ×

रोशनी को यार अब मत रोइये
स्याह पड़ता जा रहा दिनमान है.

× × ×

अर्श पर पर उड़ता हुआ इन्सान है
गो कि धरती से अभी अन्जान है.

प्रस्तुत संग्रह की रचनाओं के कथ्य में जहां ब्लेड जैसा पैनापन है, वहां शिल्प को कमजोरी अखरती है. लेकिन संग्रह का सुधी पाठकों द्वारा स्वागत किया जायेगा, ऐसा मेरा विश्वास है.

जर्जर कश्ती, सम्पादक—ज्ञानेन्द्र साज, प्रवेशांक
आवृत्ति–पाक्षिक, पृष्ठ–२४, मूल्य दो रुपया
सम्पर्क—शाह कमाल रोड, निकट बैंक आफ बड़ौदा, अलीगढ़.

प्रस्तुत पत्रिका में सम्पादक द्वारा तीन सर्वश्रेष्ठ रचनाओं पर पुरुस्कार को घोषणा जहाँ एक ओर स्वस्थ परम्परा है वहीं नव हस्ताक्षरो को सार्थक साहित्य सृजन के लिये प्रोत्साहन भी है. राजेन्द्र राजा की रचना प्रथम पुरुस्कार की वास्तविक अधिकारी है. राजेन्द्र राजा को बधाई. इतना सच होते हुए भी पत्रिका एक साहित्यिक प्रस्तुति न होकर समाचार पत्र का लघुरूप प्रतीत होती है. जिसमें सभी प्रकार की सामग्री भरने का प्रयास किया गया है. एक साहित्यिक पत्रिका में तथाकथित सत्यकथा का प्रकाशन

सम्पादक के व्यावसायिक दृष्टिकोण को दर्शाता है. यदि सम्पादक इस पत्रिका की साहित्यिक पहचान स्थापित करना चाहते हैं तो उन्हें सस्ती व अनुपयोगी सामग्री से अलग रखना होगा. कुल मिलाकर पत्रिका सामान्य है. कलेवर साधारण.

संरचना, (अनियतकालीन), सम्पादक-केशव रत्नम्

अंक-दो, अगस्त ८३, मूल्य—चार रुपये, पृष्ठ-१०४,

सम्पर्क-ए/६४, उर्वरक नगर, बरौनी—८५१११५

प्रस्तुत अंक में 'बहस' के अन्तर्गत ओमप्रकाश ग्रेवाल ने आज की जनवादी कहानियां और यथार्थ पर एक सही और सम्यक दृष्टि डालकर साहित्य की सार्थकता पर बहुत कुछ सोचने के लिये मजबूर कर दिया है. रामनिहाल गुंजन का लेख आलोचना को जरूरी शर्तों पर एक दिव्य प्रकाश डालता है. चारों कहानियों का चयन सम्पादक की सार्थक साहित्य पर सही पकड़े और दूरदर्शिता का परिचायक है. उर्दू के जनवादी रचनाकार श्री शमशाद सहर की स्मृति में सामग्री प्रकाशित कर सम्पादक महोदय ने पाठकों पर जो उपकार किया है, उसके लिये बधाई. 'नचिकेता' का गीत संक्रामक रोग की तरह समाज में व्याप्त गाँधीवाद पर बड़े सहज ढंग से तीखे प्रहार कर गया है. कुल मिलाकर प्रस्तुत अंक की जितनी तारीफ की जाये, उतनी कम.

— समीक्षक–अरुण लहरी
टीकाराम बिल्डिंग, आगरा रोड,
अलीगढ़-२०२००१

★

शुभ कामनाओं सहित:—

मै० श्यामसुन्दर मीतल

लोहे व सीमेन्ट के स्टाकिस्ट

मामू भान्जा मार्ग

अलीगढ़—२०२००१

दूरभाष :-
दुकान : ४५५१
निवास : ४५५१

शुभ कामनाओं सहित:—

रजि० नं० ३०६०

कमल बिस्कुट फैक्टरी

चौराहा, मदार गेट, अलीगढ़

पधारें—

* शुद्ध एवं ताजा कमल ब्रेड
* जन्म दिवस केक
* क्वालिटी आइसक्रीम
* फ्रिज का ठंडा पेय

व

विवाह, नववर्ष, क्रिसमस आदि त्यौहारों पर विशेष प्रकार के केक आदि उपलब्ध

शुभ कामनाओं सहित

शीश महल

अधिकृत विक्रेता

विमल सूटिंग

सुन्दर व आधुनिक डिजाइनों में

रेलवे रोड, अलीगढ़

सार्थक-सृजन की एक और सार्थक, प्रस्तुति

शीघ्र प्रकाश्य लघुकथा संग्रह

एक पर्त आग

सम्पर्क—डा० अशोक अग्रवाल

जयगंज अलीगढ़—२०२००१

प्रस्तुत अंक आपके हाथों में देते हुए जहां हमें हर्ष हो रहा है, वहां हमारी शारीरिक, आर्थिक, मानसिक उलझनों के कारण इस अंक को प्रूफ की अशुद्धियों और तकनीकी कमियों से बचाया न जा सका, जिसका हमें हार्दिक खेद है।

—सम्पादक

Scanned by CamScanner

शुभ कामनाओं सहित—

स्वर्ग संगीत महल —————— **पेश करते हैं**

आसान किस्तों एवं उचित मूल्य पर

टू इन वन, कुकर टेपरिकार्डर पंखे ट्रांजिस्टर मिक्सर आदि

सम्पर्क करें —
चौराहा सराय वाला, जयगंज सब्जीमंडी
अलीगढ़

प्रो०—सूरजभान राय

स्वीकृति संख्या—डी०/एल० १०२—८३

बुक पोस्ट/मुद्रित पत्रिका

सेवा में,

— — — — — — — — — — — — — — — — — — — —

— — — — — — — — — — — — — — — — — — —

— — — — — — — — — — — — — — — — — — —

सार्थक-सृजन प्रकाशन १५/१०६ ईसानगर अलीगढ़ के लिये संपादक रमेशराज द्वारा देश बन्धु प्रेस, आगरा रोड अलीगढ़ से मुद्रित.